DAMAGE BOOK

UNIVERSAL LIBRARY

OU_178127

UNIVERSAL LIBRARY

हाँ में हाँ मिलाते हुए साथियों में से एक ने कहा—"वैसा ही भला मालूम होता है जैसा कि चमन में बुलबुलें भली मालूम होती हैं।"

दूसरे साथी ने हँसते हुए कहा—"मुझे तो ऐसा भला मालूम होता है मानो बिना मशक़्क़त के ही गहरा माल हाथ लग गया हो।"

तीसरे साथी ने आगे बढ़कर कहा—"तुम सबों का बयान ग़लत है। मुझे तो ऐसा भला मालूम होता है मानों ईद का चाँद मुद्दत के बाद दिखाई पड़ा हो।"

चौथे साथी ने बनावटी उदासी का सहारा लेकर कहा, "भाई! जब कभी यह सवेरा आता है; मेरे दिल को बड़ी कड़ी चोट पहुँचती है। क्योंकि यह वही सवेरा है जब कि मेरे दिल में चोरों ने सेंध फोड़ी थी और मुझे मुहब्बत की दुनिया में कंगाल बना कर छोड़ गये।"

"बाग़े मुहब्बत के गुलों में खोज डाला रात भर;
गुलगुलों को खा गया मैं गुलबदन की बात पर।
बात सच्ची मैं कहूँगा दिल फ़क़ीरी में लगा;
क़ुर्बान होना है मुनासिब गुलबदन की ज़ात पर।
यह चमन दिन चार का है चहचहा लो बुलबुलो!
बाद में सर है झुकाना क़ातिलों की लात पर।

हो मुहब्बत की कटारी, डर नहीं है मौत से ;
क्योंकि वह भी नाचती है गुलबदन की बात पर।"

पाँचवें साथी की इस शायरी को सुनकर सभी साथी हँस पड़े। उसने चौथे साथी से कहा—"भाई ! तुम्हारी सी हालत मेरी भी है। जब सवेरा आता है तब मुझे भी रुलाई आती है क्योंकि यह वही वक्त है जिस वक्त मेरी गुलबदन ने मुझसे कुछ लिखने के लिए कहा था और मैं कुछ भी न लिख सका। बेचारी के अरमान यों ही रह गये। हाय री शायरी ! तू उस वक्त कहाँ चली गई थी !" कहता हुआ वह बनावटी रुलाई रोने लगा।

गानेवाले युवक ने कहा—"भाई ! तुम्हारी इस कहानी से मुझे बड़ा रंज हो रहा है।"

पहिला साथी बोला—"तो फिर एक छोटी-सी किताब में इसकी कविता लिख डालो। तुम्हारा भी नाम होगा।"

दूसरा साथी बोला—"परिन्दों पर तो आँसू बहाकर वाल्मीकि जी ने रामायण की रचना की थी और एक चलते-फिरते खाते-पीते आदमी पर आँसू बहाकर ये छोटी सी किताब लिखेंगे ? बड़े शर्म की बात है।"

"दिल के दिल की ली तलाशी,
दिल गया दिल छोड़ कर।"

तीसरे साथी की इस कविता को सुनकर चौथे साथी ने कहा—"फिर क्या हुआ ?"

पाँचवें साथी ने कहा—"होगा क्या? दुम दबाकर चले आये और रजाई ओढ़कर सो गये।"

तीसरे साथी ने कहा—"अजी नहीं, बड़ी कोशिश की।"

चौथा साथी—"कैसी कोशिश की?"

तीसरा साथी—"खंजर चलाया शायरी का,
तुक में तुक को जोड़ कर।"

दूसरा साथी बोला—"मेरा भी हाल सुना जाय।"

सभी साथियों ने कहा—"हाँ हाँ, बड़े चाव से सुनेंगे।"

दूसरा साथी—"दिल के दिल की तलाशी,
लोमड़ी की दुम मिली;
(बस) चल पड़ा मैं लखनऊ को,
तुक में तुक जोड़ा नहीं।"

चौथा साथी—"तुम तो थर्ड क्लास के शायर मालूम होते हो।"

दूसरा साथी—"तभी तो थर्ड क्लास का टिकट लेकर चलता हूँ।"

चौथा साथी बोला—"अच्छा लखनऊ पर मैं अपनी शायरी सुनाता हूँ। अपने अपने कान खड़े कर लो।

सब साथियों ने कहा—"लखनऊ पर शायरी की है?"

चौथा साथी—"तो क्या लोमड़ी की दुम पर शायरी करता?"

दूसरा साथी—"जब लखनऊ की लोमड़ी से भेंट होगी तब समझोगे कि उसकी दुम में कैसा जौहर है? लोमड़ी ने दुम हिलाया नहीं कि तुम उसके ग़ुलाम बने।"

तीसरा साथी—"बस ग़ुलामी का सहारा,
हम ग़ुलामों के लिए;
दुम झाड़ना ही रह गया है,
हम ग़ुलामों के लिए।
इन्सान बन पैदा हुए हम,
यह ख़ुदा की भूल है;
हैवान मालिक हैं बने सब,
हम ग़ुलामों के लिए।
डर नहीं गर लखनऊ में,
लोमड़ी मिल जायगी;
हैवान की ख़िदमत बदी है,
हम ग़ुलामों के लिए।"

दूसरा साथी—"इतनी रद्दी शायरी जिसकी कि कुछ हद नहीं। मालिक, जिन पर कि ख़ुदा की ख़ास मेहरबानी रहती है उनको हैवान बताते हो? छिः"

चौथे साथी ने कहा—"अच्छा, इन सब बातों को छोड़ो। आओ हम सब मिल कर कोई अच्छी बातें करें।"

पाँचवाँ साथी—"मुझे तो ये सब बातें बहुत अच्छी मालूम होती हैं। आओ शायरी में बातें की जायँ।"

पहिला साथी—"ग़ुलामी है हमें प्यारी,
नहीं आज़ाद होना है;
इसी से लड़ रहे हम सब,
वही होगा जो होना है।"

दूसरा साथी—"अगर होते वतन के तो,
इन्हें प्यारा वतन होता;
हमारे राह का रोड़ा,
हमारा ही रतन होता।"

तीसरा साथी—"कटारी लीडरी की है,
हमारा ख़ून जो पीती;
दिखाकर नूर मज़हब का,
उगलती बात जो बीती।"

चौथा साथी—"लड़ाई है जिन्हें प्यारी,
वही हैं देश के दुश्मन;
छिपे पर्दों में बैठे हैं;
निकलते दोस्त लेकिन बन।"

पाँचवाँ साथी—"कोई "अल्लाह" कहता है,
कोई कहता है "हे ईश्वर!"

मगर गुमराह होकर सब,
भुला बैठे हैं अपना घर।"

गानेवाले युवक ने कहा—"नहीं अल्लाह मसजिद में,
न मन्दिर में मिला ईश्वर;
जहाँ बाग़े मुहब्बत है,
वहीं गुल बन खिला ईश्वर।"

सभी साथी एक साथ—वतन की भलाई करेंगे करेंगे।
वतन के लिए हम मरेंगे मरेंगे॥

ये हिन्दू मुसलमाँ औ, ईसाई हैं जो;
इन्हें साथ लेकर चलेंगे चलेंगे॥
ख़ज़ाना व पल्टन वज़ारत नहीं है,
ग़रीबों को लेकर बढ़ेंगे बढ़ेंगे॥

मुहब्बत भरी है ग़रीबों के दिल में;
ख़ुदा की इबादत वहीं हम करेंगे।
वतन की भलाई करेंगे करेंगे॥

इतने में लखनऊ स्टेशन आ गया। सभी साथी अपना अपना सामान ठीक करने में लग गये और जब रेलगाड़ी स्टेशन पर आकर खड़ी हुई तब गानेवाले युवक ने अपने सभी साथियों से बड़ी भलमनसाहत के साथ कहा—"देखना, मुझ ग़रीब को भूल मत जाना।"

दूसरा परिच्छेद

"सुन्दर !"

"भाभी !"

"जब मैं सोने के लिए आँखें बन्द करती हूँ तब मुझे ऐसा मालूम होता है मानों कोई मेरे पास आकर कुछ कहना चहता है। मैं उससे दूर भागने के लिए कोशिश तो करती हूँ लेकिन हर समय मैं उसे अपने ही पास पाती हूँ।"

"भाभी ! बीमारी ने तुम्हें बहुत कमज़ोर कर डाला है इसलिए तुम्हें ऐसा मालूम होता है।"

"सुन्दर ! इतना ही नहीं। जब वह मुझे दिखाई पड़ता है तब वह कहता है, "देवि ! तुम्हारे लिए यह संसार ठीक नहीं है। तुम स्वर्ग की देवी हो और स्वर्ग में ही रहना तुम्हारे लिए ठीक होगा।"

"भाभी ! यह ठीक है कि तुम स्वर्ग की देवी हो लेकिन मेरा यह ख़्याल है कि जहाँ कहीं तुम रहोगी वहीं पर स्वर्ग बात की बात में बन सकता है। देखो न, जब से तुमने इस घर में पैर रखा तभी से इस घर की शान कई गुनी बढ़ गई है। सभी तो तुम से ख़ुश हैं फिर तुम्हें तकलीफ़ किस बात की है ?"

"मुझे तो तकलीफ़ नहीं है लेकिन वह मानता ही नहीं। देखो, वह इसी ओर चला आ रहा है। सुन्दर! क्या तुम उसे रोक सकते हो? मैं उसके साथ जाने को तैयार नहीं हूँ।"

निर्मला की बातों को सुनकर सुन्दर चक्कर में पड़ गया। उसकी समझ में कुछ भी न आया। अपने को सम्हालते हुए उसने कहा, "रोकूँ तो किसे? मुझे तो कोई दिखाई नहीं पड़ता।"

निर्मला ने अपने कमरे की खिड़की की ओर इशारा करते हुए कहा—"वह देखो, किस तरह मेरी ओर ताक रहा है! देवदूत! तुम्हारा दिल बड़ा कड़ा है। मानती हूँ कि देवताओं ने मुझे याद किया है लेकिन इतनी जल्दी मैं कैसे चल सकती हूँ? अगर मैं देवी हूँ तो मुझे देवियों की तरह काम कर लेने दो। एक बार संसार में आनंद की धारा बहा लेने दो। मानती हूँ कि ज़िन्दगी दो दिन की है फिर भी मेरे लिए ये दो दिन ही बहुत हैं। इसीमें मैं अपना काम कर सकूँगी।"

निर्मला की बिना सर-पैर की बातों को सुनकर सुन्दर बहुत घबड़ाया। वह डाक्टर को बुलाने के लिए चल पड़ा। ज्यों ही फाटक पर पहुँचा त्यों ही हमारे परिचित गाने-वाले युवक से उसकी भेंट हो गई। उसे देखकर सुन्दर ने कहा, "हम लोग तो आपका रस्ता ही देख रहे थे। अच्छा हुआ कि आप आ गये।"

उस युवक ने सुन्दर से पूछा "घर में सब कुशल तो है?"

सुन्दर ने कुछ कहना चाहा लेकिन कुछ भी न कह सका। उसकी आँखों में आँसू भर आये। युवक ने फिर पूछा :—

"सुन्दर ! उदास होने का सबब क्या है?"

"भाभी की तबियत ठीक नहीं है।"

"तो फिर तुमने मेरे पास तार क्यों नहीं भेजा ?"

"भाभी ने भेजने ही न दिया।"

"सुन्दर ! अपनी भाभी से छिपाकर क्या तुम मेरे पास तार न भेज सकते थे ? कम से कम घर का तो समाचार मालूम ही हो जाता।"

"आप जानते हैं कि मैं भाभी से कोई बात छिपाता नहीं हूँ। ऐसी हालत में छिपाकर तार भेजना ठीक नहीं समझा।"

"बात तो सही है लेकिन तुम्हारी भाभी की ख़बर तक भी मुझे न मालूम हो—तुम्हीं बताओ कि यह कहाँ तक ठीक समझा जाय। ऐसा न करना चाहिए था।"

"इन सब बातों का जवाब भाभी ही देंगी।"

"सुन्दर ! तुम्हारी बातों को सुनकर मुझे ऐसा मालूम हो रहा है मानों मेरे पैरों के नीचे से धरती खिसकती जा रही हो। ख़ैर, अब अफ़सोस करने से हो ही क्या सकता है? जो होनहार है वह होकर ही रहेगा। चलो अन्दर चलें।"

दोनों के दोनों उसी कमरे में जा पहुँचे जहाँ कि निर्मला बीमारी की हालत में पड़ी हुई थी। सुन्दर ने उसके पास जाकर कहा—"भाई साहब आये हुए हैं।"

डबडबाती हुई आँखों से युवक की ओर देखकर निर्मला ने कहा—"बहुत देर में आये ? मैं तो अब देवदूत के साथ चलने के पथ पर हूँ। प्रियतम !"

निर्मला की बातों को सुनकर युवक की आँखों से आँसुओं की नदी बह चली। उसने अपने दिल को सम्हालने की बड़ी कोशिश की लेकिन सम्हाल न सका। निर्मला ने धीमी आवाज़ से कहा—"तुम भी आँसू बहाने लगे ? प्रियतम ! मैं तो उस देश में जा रही हूँ जहाँ कि सभी आज़ाद हैं। क्या तुम भी मेरे साथ चलोगे ?"

युवक निर्मला की ओर ताकता ही रह गया। निर्मला ने फिर कहा—"अभी तुम मेरे साथ चलकर क्या करोगे? मुझे पहले जाने दो। देवदूत ! अब मैं तैयार हूँ।"

युवक ने सुन्दर से पूछा "यह देवदूत कौन है ?"

सुन्दर ने साधारण ढंग से कहा, "मुझे इसका कुछ भी पता नहीं है।"

निर्मला ने उस युवक को अपने पास बुलाकर कहा, "मेरे लिए तुम क्या लाये हो ? मैं तुम्हारा आखिरी उपहार चाहती हूँ।"

युवक—"तुम्हारे लिए अपना वह प्रेम लाया हूँ जो कि सिर्फ़ इस दुनिया में ही नहीं बल्कि इस दुनिया के बाद भी क़ायम रहे।"

निर्मला—"प्रियतम ! तुम्हें छोड़ने को तो जी नहीं चाहता पर क्या करूँ ? देवदूत मानता ही नहीं। क्या मैं जा सकती हूँ ?"

युवक निर्मला के पास बैठ गया और बड़े प्रेम से बोला—"निर्मला !"

निर्मला ने युवक की ओर ताकते हुए कहा—"प्रियतम ! अब देवदूत के साथ जाने में मुझे कोई तकलीफ़ न होगी लेकिन मुझे भूलना नहीं।"

"कहती क्या हो ?"

"मुझे भूलना नहीं। कभी न कभी हम दोनों फिर एक होंगे।"

"जिस निर्मला ने मुझे इतना अपनाया उसे मैं भूल जाऊँगा ? कभी नहीं।"

"तो फिर अब मैं चलती हूँ ?"

"ऐसा मत कहो।"

"प्रियतम ! सच कहती हूँ। अपने देवता को देखते देखते चल देना ख़ुश नसीबो की ही निशानी है।"

"देवि ! जुदाई की धधकती हुई आग में मुझे जलाने में ही अगर तुम अपने लिए सुख समझती हो तो इसे मैं अपने लिए दुःख ही समझता हूँ। जब प्रेम की दुनिया में हम दोनों एक हुए हैं तब अब फिर ज़ुदा हों कितने बड़े दुःख की बात है !"

निर्मला ने बड़ी कठिनाई के साथ मुसकुराते हुए कहा—"मैं तो अब उस दुनिया में जा रही हूँ जहाँ कि कभी जुदाई होती ही नहीं।"

"तो फिर अगर मैं भी साथ चलूँ तो क्या हानि है ?"

"इसी प्रश्न को लेकर मैं भी हैरान हूँ। लेकिन क्या करूँ ?

देवदूत मानता ही नहीं। प्रियतम ! फिर कभी मिलूँगी। क्षमा-करना। भूलना नहीं।"

इतने में डाक्टर साहब आ पहुँचे। युवक को देखते ही डाक्टर साहब ने पूछा—"मदन ! तुम कब आये ?"

"अभी चला आ रहा हूँ।"

"ख़ुश तो हो ?"

"मेरी ख़ुशी तो..................." कहते कहते मदन रुक गया।

डाक्टर साहब ने निर्मला के रोग की जाँच की और बड़ी ही धीमी आवाज़ से कहा—"अगर तीन घंटे पार हो गये तब तो ख़ैर है, नहीं तो ईश्वर की मर्ज़ी पर सब छोड़ना पड़ रहा है।"

इतना कहकर डाक्टर साहब चले गये। मदन और सुन्दर दोनों ही चुप चाप खड़े रहे। थोड़ी देर के बाद सुन्दर ने मदन से कहा, "न हो तो डाक्टर साहब से दुबारा जाँच करने के लिए कहा जाय। क्यों कि यह तो रोग का चढ़ाव और उतार है। कई बार ऐसा हो चुका है। घबड़ाने की बात नहीं है।"

मदन ने कुछ कहना चाहा पर कह न सका। निर्मला ने इशारे से सुन्दर को अपने पास बुलाकर कहा, "देखो ! मेरे बाद अपने भाई साहब को आराम से रखना।"

आसुओं को बहाते हुए सुन्दर ने कहा—"भाभी ! तुम्हारे बाद इस घर का क्या होगा ?"

"मेरी जगह पर दूसरी भाभी आ जायगी। वही इस घर को सम्हालेगी। अफ़सोस क्यों करते हो ?"

इतना कहकर निर्मला ने सुन्दर से कहा—"ज़रा अपने भाई साहब को बुला दो। आख़िरी भेंट कर लूँ।"

मदन पास खड़ा ही था। निर्मला के पास जाकर उसने पूछा—"मैं तुम्हें कैसे सुखी बना सकता हूँ ?"

"बस, इस काग़ज़ पर जो लिखा हुआ है उसे मेरे ही सामने पढ़ लो। मुझे बड़ा सुख मिल जायगा। कहती हुई निर्मला ने एक काग़ज़ मदन को दे दिया। उसमें उसीकी लिखी कविता थी। मदन पढ़ने लगा।

"जीवन-पथ का पथिक बनाकर भेजा था मुझको विधि ने ;
क्षण भर में सर्वस्व दिया था सरल हृदय जीवन-निधि ने।
बादल की थी एक बूँद मैं जिसका था आधार नहीं ;
प्यार नहीं, सत्कार नहीं औ' कुछ भी था अधिकार नहीं।
नये पथिक सी भटक रही थी पथ का था कुछ ज्ञान नहीं ;
अरमान न थे, अभिमान न था, सुख का कुछ था ध्यान नहीं।
उनको पाकर मैंने समझा पथ में ही प्रियतम मिलते ;
प्रियतम के आदर्श प्रेम से प्रेम-सुमन अनुपम खिलते।
उन सुमनों की सुन्दरता में प्रियतम की है सुन्दरता ;
जो कुछ "मंजुल" दीख रहा है उनकी ही है उत्तमता।
जिधर देखती उधर वही हैं किन्तु नहीं मिलने पाती ;
बन कर जितना चलती हूँ मैं उतना ही मैं मिट जाती।

बहुत बनी मैं बहुत मिटी मैं इसकी गाथा क्या गाऊँ ?
प्रश्न यही है निशिदिन मेरा मिलन मार्ग कैसे पाऊँ ?
गिन गिन कर रजनी के तारे उनको चाहा अपनाना ;
किन्तु कहूँ क्या मिलन-निशा में नहीं हुआ उनका आना ।

मिथ्या मिलन समझ दुनिया का पृथक् यहाँ से होती हूँ ;
आशा और निराशा दोनों सभी यहीं मैं खोती हूँ ।
आई थी जिस भाँति यहाँ पर उसी भाँति मैं जाती हूँ ;
प्रेम-राज्य के मधुर मिलन को क्षण-भर में अपनाती हूँ ।

प्रियतम से कह देना कोई प्रेम–राज्य है दूर नहीं ;
अगर कभी वे खोजेंगे तो उन्हें मिलेगा यहीं कहीं ।"

अभी कविता शेष भी न हो पाई थी कि इतने में सुन्दर ने चिल्ला कर कहा—"भाई साहब ! भाभी की ओर तो देखो। हिचकियाँ कैसी आ रही हैं ?"

मदन निर्मला के पास पहुँच गया लेकिन कुछ कर न सका। वह हमेशा के लिए चल बसी ।

तीसरा परिच्छेद

निर्मला के बाद मदन की हालत अजीब सी हो गई। हर एक समय उसके दिल में निर्मला की याद बनी रहती थी। खाने में, पीने में, सोने में, जागने में, इधर उधर घूमने में यानी जीवन के हर एक काम में उसे ऐसा मालूम होता था मानों उसका कुछ खो गया हो। हर एक समय उसका चित्त उदास बना रहा करता था। उसकी ऐसी दशा देखकर सुन्दर ने समझाते हुए कहा—"भाई साहब! आपके इस तरह उदास रहने से मुझे बड़ा रंज होता है।"

मदन ने गहरी साँस लेते हुए कहा—"जब बाग़ में फूल ही नहीं तब भला उसकी ओर दिल का खिंचाव कैस हो सकता है? जब फूलों में ख़ुशबू ही नहीं तब उनके लिए आँखें क्यों पागल होने लगीं? अगर आँखों में मस्ती ही नहीं तब फिर ज़िन्दगी ही बेकार है। आँखों की मस्ती बहाल रखने के लिए अगर सच्चा साथी ही नहीं तो फिर दुनियाँ को सूनी ही समझना चाहिए। सूनी दुनिया में ख़ुशी कैसे नसीब हो सकती है? मेरी ख़ुशी तो निर्मला के साथ चल बसी। उदासी दूर करूँ तो कैसे करूँ? मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है।"

सुन्दर—"मैं आप को किस तरह समझाऊँ यह मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है। फिर भी इतना ज़रूर कहूँगा कि अब आप

धीरज के साथ काम लें क्योंकि जीवन के कामों का ख़ातमा यहीं से नहीं होता है।"

सुन्दर की बातों को सुनकर मदन ने चाहा कि वह अपने दिल को अच्छी तरह उसे दिखा दे लेकिन कुछ भी न कर सका। मदन को चुप देखकर सुन्दर ने फिर कहा—"मैं यह मानता हूँ कि भाभी देवी थीं। उनके गुणों की क्या तारीफ़ करूँ? जिस दिन से वे हमारे इस घर में आईं उस दिन से यह घर हमेशा जगमगाता रहा। सभी ओर ख़ुशी ही ख़ुशी दिखाई पड़ती थी। यहाँ तक कि बाग़ की फूल-पत्तियाँ भी कभी मुरझाई हुई नहीं दिखाई पड़ीं। भाभी देवी थीं। देवी की तरह आईं और देवी की तरह चली गईं।"

मदन—"बस यही सोचकर मेरा भी दिल रो उठता है। जीवन की अभी पहली लहर भी पूरी नहीं हो पाई थी कि उसका अचानक लोप हो गया। सुन्दर! तुम तो यह अच्छी तरह जानते हो कि मुझे उसकी उस लहर में ही सूरज की रोशनी और चाँद की चाँदनी दोनों ही दिखाई पड़ती थीं। लेकिन अब तो सब सूना दिखाई पड़ता है। तालाब है लेकिन पानी नहीं, देह है लेकिन उसमें जान नहीं, दुनिया है लेकिन चैन नहीं, मन्दिर है लेकिन देवी नहीं, मैं हूँ लेकिन निर्मला नहीं। फिर सुख कहाँ?"

सुन्दर—"आपकी बातों को काटूँ इतनी ताक़त मुझमें नहीं है। फिर भी आप से इतना कहने का साहस जरूर करूँगा कि जो

हीरा हाथ से खो गया हो उसके लिए दिनरात सोचते रहना कहाँ तक ठीक है यह आपही सोचें।"

इस बार मदन ने एक गहरी साँस ली और पास में पड़ी हुई आराम कुर्सी पर लेट गया। सामने निर्मला की तसवीर टँगी हुई थी। वह एकटक उसीकी ओर देखने लगा। अचानक उसके मुँह से "हा निर्मला!" इतना निकल पड़ा। सुन्दर को बड़ी घबड़ाहट हुई। वह मदन की ओर ताकने लगा। मदन की आँखों में निर्मला की तसवीर थी और सुन्दर की आँखों में मदन के भावों की छाया थी। मदन के दिल में निर्मला की याद थी और सुन्दर के दिल में मदन की तकलीफ़ की धड़कन थी। मदन निर्मला के रास्ते पर चलने की सोच रहा था और सुन्दर उसे रोकने के लिए मीठी भाषा की खोज में था। मदन के लिए संसार में कोई सुख न था और सुन्दर दुःख में भी सुख का बग़ीचा लगाना चाहता था। मदन ने सुन्दर से कहा—"संसार से क्या निर्मला के नाम का लोप हो जायगा? मालूम होता है कि उसे अब भुलाना ही पड़ेगा।"

सुन्दर—"निर्मला के नाम का लोप होना आसान नहीं है। मैं यह नहीं चाहता कि आप भाभी को भूल जायँ। मेरी तो यही राय है कि भाभी के नाम को अमर बनाने के लिए आप अपने कामों पर विचार करें। संसार में हम कुछ न कुछ काम करने के लिए ही पैदा हुए हैं। जब तक हम संसार में हैं तब तक कामों से

हमारा पिण्ड नहीं छूट सकता। फिर इनसे दूर रहकर विरागी बनना बेकार है।"

मदन चुप रहा। किस तरह सुन्दर की बातों का जवाब दिया जाय यह उसकी समझ में न आया। सोचते सोचते उसे फिर निर्मला की याद आ गई। आँखों में आँसू भर आये। मदन ने रोकने की बड़ी कोशिश की लेकिन वे रुके ही नहीं। सुन्दर भी आँसू बहाने लगा। सूने कमरे में इन दोनों भाइयों के आँसू ज़मीन पर गिरे और हवा के साथ हवा हो गये। दुनिया को इसका पता ही नहीं।

पाठकों को मालूम हो कि मदन और सुन्दर दोनों चचेरे भाई थे। लेकिन आपस में छल-कपट न रहने से वे दोनों सगे भाई से भी बढ़कर थे। मदन की उम्र लगभग पच्चीस साल के थी और सुन्दर उससे सिर्फ़ दो साल छोटा था। मदन का विवाह हुए अभी दो साल भी पूरे नहीं हुए थे कि यह दुःख भरी घटना हो गई। दोनों भाई एक ही साथ रहते थे। मदन पढ़ा लिखा सच्चे दिल का शान्त युवक था। सुन्दर पढ़ा लिखा और सच्चे दिल का होने पर भी थोड़ा सा चंचल था और अपने बर्ताव में बहुत ही साफ़ था। मदन और सुन्दर दोनों ही आपस में एक दूसरे से अपनी बातें नहीं छिपाते थे। उनके इस बर्ताव को कुछ लोग अच्छा नहीं समझते थे। कोई कहता कि बड़े भाई को छोटे भाई से ऐसी बातें करना ठीक नहीं है। कोई कहता छोटे भाई को बड़े भाई से दब कर बातें करनी चाहिए। लेकिन वे दोनों

हँस कर यही जवाब देते कि "शास्त्र में तो सोलह वर्ष के बेटे को भी दोस्त बनाने के लिए लिखा है हम तो भाई-ही ठहरे। हर्ज क्या है ?" सब के सब चुप हो जाते।

सुन्दर को आँसू बहाते हुए देख कर मदन ने कहा—"सुन्दर! तुम मेरे साथ कब तक आँसू बहाते रहोगे ? मेरे जीवन का सुख निर्मला के साथ आया और निर्मला के ही साथ चला गया। तुम दुःख के रास्ते पर मेरा साथ दो यह ठीक नहीं है।"

सुन्दर ने चकित होकर कहा—"भाई साहब! आप कहते क्या हैं ?"

मदन—"ठीक कहता हूँ। अभी तो तुमने उस दुनिया में पैर ही नहीं रखा जिसमें जाते ही ज़िन्दगी का रँग ही बदल जाता है। सुन्दर! मैं तो अब सिर्फ़ रोने के लिए ज़िन्दा हूँ लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि तुम भी मेरे साथ रोया करो। यह ठीक है कि हम दोनों एक ही पेड़ की दो शाखों के फूल हैं; फिर भी हम दोनों का नसीब जुदा-जुदा है। तुम ख़ुश रहो, तुम्हारे जीवन में सुख की लहरें लहराती रहें, लेकिन मेरे जीवन की छाया तुम पर न पड़े; यही मेरी दिली मंशा है।"

सुन्दर कुछ कहने ही जा रहा था कि इतने में एक फ़क़ीर दरवाज़े के सामने आकर गाने लगा :—

ख़ुश हाल रहो ख़ुश हाल रहो।
ईश्वर भी कहो अल्लाह कहो ;
ख़ुश हाल रहो ख़ूश हाल रहो॥

मुल्के मुहब्बत में जो पड़ा ;
दिलदार वही बेशक है बड़ा ;
दुनिया में वही सरदार हुआ ;
दुनिया से मिली उसको ही दुआ ;
.खुश हाल रहो .खुश हाल रहो ॥
हुक्मे .खुदा अव्वल है यही ;
गुमराह न हो गुमराह न हो ।
ईश्वर भी कहो अल्लाह कहो ;
.खुश हाल रहो .खुश हाल रहो ॥"

फ़क़ीर आया और चला गया। मदन और सुन्दर दोनों ही फ़क़ीर के गीत पर अपनी अपनी राय ज़ाहिर करने लगे। मतलब यह कि फ़क़ीर के आने के पहले उनकी जो दुनिया थी वह अब न रह गई। जीवन में एक नई लहर पैदा हो गई। मदन ने कहा—"कितना उम्दा गीत था !"

"इसी गीत ने ही नई ताक़त देने की मेहरबानी की है ?"

"मुल्के मुहब्बत में जो पड़ा ;
दिलदार वही बेशक है बड़ा ;

कितना अच्छा पद है। जी में आता है कि बार बार इसीको गाऊँ। हम दोनों जिस अथाह समुद्र में डूबे हुए थे वह तो न जाने किधर हट गया। फ़क़ीर ! तुम ग़रीब हुए तो, क्या हुआ ? दिल तो तुम्हारा बड़ा है। अगर तुम्हारा दिल बड़ा न होता तो इतनी बड़ी वात तुम्हारे दिल से कैसे निकलती ! मैं तुम्हारा अहसान

मानता हूँ। तुम्हारे गीत ने दिल में घर बना लिया है। बस मेरी ज़िन्दगी की भी यही एक रागिनी होगी। तुमको मैं मान गया।"

सुन्दर ने कहा—"भाई साहब! सचमुच यह गीत बड़ा ही अच्छा है। ग़रीबों के दिल में इतनी बड़ी बात! अगर हम देश के ग़रीबों की ओर ध्यान दें तो अच्छे जौहर देखने को मिलेंगे।"

मदन—"बहुत ठीक कहते हो। अमीरों के महलों से ग़रीबों की झोपड़ी कहीं अच्छी है। अमीरों के महलों में अन्याय, अत्याचार और झूठे घमंड की भरमार रहती है और ग़रीबों की झोपड़ी में, मुहब्बत, हमदर्दी और सादगी में सचाई का साथ मिलता है। अमीरों का दिल अगर नरक है तो ग़रीबों का दिल स्वर्ग से भी बढ़कर है। अमीरों के दिल में शरारत भरी रहती है और ग़रीबों के दिल में भलाई करने की तमन्ना बनी रहती है। अमीरों के साथ शैतान रहता है और ग़रीबों के साथ ईश्वर रहता है। अमीर पाक दुनिया को नापाक बनाने की कोशिश किया करते हैं और ग़रीब दुनिया को पाक बनाये रखने के लिए अपनी ज़िन्दगी तक की भी क़ुर्बानी कर डालते हैं। अमीरों से ग़रीब हर एक बात में अच्छे हैं। मैं बहुत जल्द ग़रीबों की दुनिया देखूँगा। देखो न निर्मला ने भी अपनी कविता में लिखा है :—

प्रियतम से कह देना कोई,
प्रेम-राज्य है दूर नहीं;
अगर कभी वे खोजेंगे तो,
उन्हें मिलेगा यहीं कहीं।"

सुन्दर ने कहा—"न हो तो भाभी के नाम को अमर बनाये रखने के लिए कोई ऐसा काम किया जाय जिससे कि ग़रीबों की भलाई भी हो और भाभी का नाम भी हो।"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ लेकिन अभी तक कुछ भी ठीक नहीं कर सका।"

"मैंने तो यह सोच रखा है कि एक अनाथ महिला आश्रम खोल कर उसके आगे भाभी का नाम जोड़ दिया जावे।"

"यानी निर्मला अनाथ महिला आश्रम खोलने का तुम्हारा विचार है। मुझे भी विचार पसन्द आ गया है। तुमने तो मेरी उलझी हुई समस्या को ऐसा सुलझा दिया है कि क्या तारीफ़ करूँ?"

"मेरी समझ में तो यही आता है कि जो काम करना हो उसे जल्द शुरू कर देना चाहिए। निर्मला अनाथ महिला आश्रम तैयार हो जाने पर भाभी की लिखी हुई कविता भी पत्थर पर लिखा कर लगा दी जायगी। भाभी ने जो कविता लिखी है वह मामूली कविता नहीं है। उनकी उस कविता में उनके दिल की सच्ची तसवीर खिंची हुई है। उसे भुलाना ठीक नहीं होगा।"

"सुन्दर! मुझे तुम्हारी बातें इतनी अच्छी लगती हैं कि जी में आता है कि बराबर उन्हीं को सुना करूँ। तुम निर्मला को इतना मानते हो यह मुझे नहीं मालूम था।"

चौथा परिच्छेद

केतकी निर्मला की छोटी बहिन थी। वह बनारस के किसी एक गर्ल्स हाई स्कूल के दसवें दर्जे में पढ़ती थी। अपनी बहिन निर्मला के मरने का समाचार पाकर वह लखनऊ के लिए चल पड़ी।

रंग तो उसका साँवला था फिर भी देखने में बहुत ही सुन्दर मालूम होती थी। जिस ओर वह जाती उसी ओर दुनिया की निगाहें उसके लिए पागल हो जातीं। केतकी की ज़िन्दगी में इठलाती जवानी की चमकीली किरणें अपना जादू दिखाने के लिए दुनिया में आगे आगे बढ़ने के लिए मौक़ा खोज रही थीं। लेकिन केतकी को इन सब बातों का कुछ भी पता न था। वह तो अपनी नई दुनिया में मस्त थी।

बनारस से लखनऊ के लिए रेल पर बैठते ही उसके साथ और दो मुसाफ़िर हो गये। भगवान ने इन दोनों को अपने ही हाथ से बनाया था इसलिए इनकी आदतें बिलकुल निराली थीं। ज्यों ही उन दोनों ने उस डिब्बे में केतकी को बैठे देखा त्यों ही वे भी उसमें जाकर बैठ गये और आपस में बातें करने लगे।

पहिला मुसाफ़िर—"अच्छा यह तो बताओ कि तुम्हें कौआ पसंद है या कोयल ? बुलबुल पसंद है या बटेर ?"

दूसरा मुसाफिर—"पहिले मुझे पूछने दो।"

पहिला मुसाफ़िर—"अच्छी बात है तुम्हीं पूछो।"

दूसरा मुसाफ़िर—"तुम्हें कोयला पसंद है या लकड़ी? काली पसंद है या सफ़ेद? चप्पल पसंद है या बूट?"

पहिला मुसाफ़िर—"मुझे कोयला, काली, चप्पल यही पसंद हैं।"

दूसरा मुसाफ़िर—"मुझे तो कौआ पसंद है।"

उन दोनों की बातों को सुनकर केतकी को हँसी तो आई लेकिन उसने अपनी हँसी को रोकते हुए कहा—"आप लोग किधर जाँयगे?"

पहिला मुसाफ़िर—"जिधर दुनिया जायगी।"

दूसरा मुसाफ़िर—"अजी नहीं, जिधर रेल का इंजन जायगा उधर·········।"

केतकी—"मैं यह पूछना चाहती हूँ कि आप लोगों के जाने का इरादा कहाँ तक का है? नज़दीक जायँगे या दूर?"

पहिला मुसाफ़िर—"नवाबी के अस्पताल तक जाने का इरादा है।"

दूसरा मुसाफ़िर—"यहाँ से कहीं दूर नहीं जायँगे। नज़दीक ही रहेंगे।"

केतकी—"आप लोग ठीक ठीक जवाब क्यों नहीं देते?"

पहिला मुसाफ़िर—"मुझे औरतों की बात बर्दाश्त नहीं है।"

दूसरा मुसाफ़िर—"तो फिर मुझे कब बर्दाश्त है ?"

पहिला मुसाफ़िर केतकी से हाथ जोड़ कर बोला—"आपको मैं देवी के समान मानता हूँ। आप इण्टर क्लास के ज़नानी डिब्बे में जाकर आराम से बैठ जावें। क्यों हम लोगों को लड़ाने के लिए आप मेहरबानी कर रही हैं ?"

केतकी ने ग़ुस्से के साथ जवाब दिया—यह मेरी मर्ज़ी की बात है। आप लोग बोलनेवाले कौन होते हैं ? औरतें मर्दों से कम किस बात में हैं ? मैं इसी डिब्बे में बैठूँगी।"

"हम लोग आपसे बहस करने को तैयार नहीं हैं। आप की जहाँ ख़ुशी हो वहीं आप बैठें लेकिन ऐंठें नहीं।" कहकर दोनों मुसाफ़िर उसी इण्टर क्लास के डिब्बे में बैठे रहे।

थोड़ी देर के बाद रेल चल पड़ी। केतकी अपने पास के एक उपन्यास को पढ़ने लगी। दोनों मुसाफ़िर केतकी की ओर ताक-ताक कर बातें करने लगे। उन्हें यह नहीं मालूम था कि उनके साथ की देवी जी भी वहीं जा रही हैं जहाँ कि वे दोनों जा रहे थे।

पहिले मुसाफ़िर ने दूसरे मुसाफ़िर से कहा—"परसाल जब मैं कलकत्ता गया था तब जानते हो कि क्या हुआ था ?"

दूसरा मुसाफ़िर—"मेरे घर में बेटा हुआ था और तुम्हारे घर में भैंस के पड़वा हुआ था। और क्या हुआ था ?"

पहिला मुसाफ़िर—"तुम से तो मैं हार गया। पूछता हूँ क्या

और तुम जवाब देते हो क्या ? ज़रा भले आदमी की तरह तो बोलो ।"

दूसरा मुसाफ़िर—"भले आदमी कभी मूँछ नहीं रखाते। अगर तुम्हें भले आदमी बनना है तो मूँछों को उड़ा दो।"

"फिर क्या करूँ ?"

"सब बातें मैं आज एक साथ नहीं बताऊँगा। फिर कभी।"

थोड़ी देर के लिए रेल के उस डिब्बे में सन्नाटा छा गया। पहिले मुसाफ़िर ने दूसरे मुसाफ़िर से कहा—"गोपाल ! अभी उस दिन हम सब दोस्त कितनी ख़ुशी से मदन के साथ लखनऊ गये और आज हँसने की कोशिश करने पर भी हँसी नहीं आ रही है। ऐसा मुझे मालूम होता है मानों हँसी ख़ुद हम लोगों की हँसी उड़ा रही है।"

गोपाल—"मनोहर ! कहते तो तुम ठीक हो। कौन जानता था कि मदन को इतनी जल्दी अपनी बीबी की जुदाई से ग़मगीन होना पड़ेगा ? जिस वक़्त मुझे यह समाचार मिला मैं तो अवाक् हो गया। मुझे तो पहिले सरासर झूठ मालूम हुआ लेकिन बाद में जब तुमसे मिला तब कहीं मेरा शक दूर हुआ।"

उन दोनों की बातों को सुनकर केतकी ने उपन्यास पढ़ना बन्द कर दिया और बहुत ही साधारण ढंग से पूछा—"क्या आप लखनऊवाले मदन बाबू को जानते हैं ?"

गोपाल—"जी हाँ। वे हमारे दोस्त हैं।"

मनोहर ने केतकी की ओर शर्मीली निगाह से ताक कर कहा—"वे हमारे जिगरी दोस्त हैं। क्या आप भी वहीं जा रही हैं ?"

"जी नहीं।"

"तो फिर इतनी दिलचस्पी क्यों ली ?"

"आप उन्हें जानती कैसे हैं ?"

"मेरी एक सहेली उन्हें ब्याही हुई है।"

"निर्मला—न ?"

"आप इतनी जल्दी कैसे समझ गये ?"

"क्योंकि निर्मला अब इस दुनिया में नहीं हैं इसीलिए हम लोग समझ गये। साथ ही साथ बात यह भी है कि ख़ुदा ने हम लोगों को एक ख़ास तरीक़े की समझ दे रखी है जिससे कि हम दिल तक की भी बात जान लेते हैं।"

गोपाल ने मनोहर से कहा—"अच्छा यह तो बताओ कि इनके दिल में क्या है ? और ये कहाँ तक सच बोलती हैं ?"

मनोहर ने जवाब दिया—"इनके दिल में कपट है और ये सरासर झूठ बोलती हैं। मदन बाबू से इनका कोई रिश्ता ज़रूर है।"

केतकी—"मर्दों की आदत में यही एक ऐब है कि वे किसी भी महिला से बिना सर पैर की बातें करने में तनिक भी लिहाज़ नहीं करते हैं।

गोपाल—"लिहाज़ तो यहाँ तक करते हैं कि अगर कहीं महिलाएँ इकट्ठी हो जाती हैं तो फिर वे पर्दे में जाकर बैठ जाते हैं।"

केतकी—"लेकिन वहाँ से भी वे उनकी तरफ़ ताका करते हैं।"

मनोहर—"महिलाएँ और वह भी आप जैसी-जब सामने ख़ुद आकर खड़ी हो जाती हैं तब क्या मर्द अपनी आँखों पर पट्टी बाँध लिया करें या जीभ पर ताला बंद कर लिया करें? आख़िर आप की मंशा क्या है? क्यों हम मर्दों को तंग कर रही हैं। मैदाने मुहब्बत में अगर दो एक तीर छूट ही गये तो नाराज़ क्यों होती हैं?"

केतकी—"आप लोग हद से बाहर बातें करने लगे हैं। ज़रा भलमनसाहत से बातें करें।"

गोपाल—"आप तो पहिले ही अपनी हद पार कर चुकी हैं। अगर हद का ही ख्याल था तो ज़नाना डिब्बे में क्यों नहीं बैठीं? इसके बाद रेल जब चली तब आपने ही पहिले बातें की हैं। अगर आप को हम मर्दों से परहेज़ था तो फिर क्यों हम लोगों से बोलने के लिए सब से पहिले साहस किया। हम भले आदमियों की इज़्ज़त में बट्टा लगाने से क्या आप को कोई ख़ास फ़ायदा हासिल होगा?"

मनोहर—"आजकल की हवा ही निराली है। जितना ही मर्द दबते जा रहे हैं उतना ही औरतें सर पर चढ़ती आ रही हैं। हिन्दुस्तान आज़ाद हो या न हो लेकिन औरतों ने तो एकदम

आज़ादी का डंका पीट दिया है। जिधर देखो उधर ही उनकी ढाई चावल की खिचड़ी पक रही है।"

गोपाल ने केतकी से कहा—"देवी जी! आप मेरे दोस्त मनोहर की बातों पर न ध्यान दें। इनकी मिज़ाज में थोड़ी सी सनक है। जब से किसी एक महिला ने इन्हें अखाड़े में पछाड़ा तब से इनके दिमाग़ की नस टेढ़ी पड़ गई है। किसी भी महिला को देख कर हँस देना या उससे भिड़ जाना इनके लिए मामूली बात है। आप यह बतलाने की मेहरबानी करें कि आप मदन बाबू को कैसे जानती हैं?"

"मैं पहिले ही बता चुकी हूँ कि निर्मला मेरी सहेली थी। आपके मदन बाबू उसीके पति ठहरे। इतने से ही आप सब समझ सकते हैं।" कहती हुई केतकी अपने उपन्यास को पढ़ने लगी।

केतकी की ओर ताकता हुआ मनोहर गोपाल से कहने लगा, "मेरा ही लिखा हुआ उपन्यास तो पढ़ रही हैं और मुझ से ही परहेज़ कर रही हैं! गुड़ तो खाती हैं लेकिन गुलगुलों से परहेज़ है!"

गोपाल—"तुम उपन्यास लिखते हो ठीक है लेकिन इसके माने ये नहीं हैं कि तुम निरे दूध के धोये हुए पूरे महात्मा हो गये। अगर तुम्हारे लिखने का ढंग अच्छा है और तुम्हारे उपन्यास सब जगह बड़े चाव से पढ़े जाने लगे हैं तो क्या इससे यह थोड़े ही साबित होगा कि तुम्हारा दिल बड़ा पाक है। जब

तुममें इतनी भी तमीज़ नहीं है कि रास्ते में किसी पढ़ी लिखी महिला से किस तरह बातें की जानी चाहिए तब तुम्हारा उपन्यास लिखना ही बेकार है।"

मनोहर—"न हो तो तुम्हीं अब उस्ताद बन जाओ जिससे कि आयन्दा ऐसी ग़लती होने का मौक़ा न आये। मुझे तो तुमने शर्मिन्दा कर दिया। खैर, तुम मेरे दोस्त ठहरे नहीं तो.........।"

"नहीं तो तुम मेरी नाक काट लेते, न?"

"नाक नहीं जीभ काट लेता। एक उपन्यास लेखक की इतनी तौहीनी?"

"अच्छा, दिमाग़ की नसों को ठीक कर लो। नहीं तो सारा बना बनाया खेल चौपट हो जायगा। ज़रा सम्हल कर बैठो।"

"अच्छी बात है।"

"अच्छा अब तमीज़दारी की बातें सुनो। रास्ते में जब कोई भी महिला मिले और तुम्हारा दिल उससे बोलने के लिए तैयार हो तो फ़ौरन उसके आगे आगे एक लम्बी दौड़ लगा आओ।"

"इसके बाद?"

"फिर उधर से वापस आओ और दस क़दम पीछे उसी तरह चले जाओ और अपना अच्छा-सा रूमाल निकाल कर देवी जी के पास जाकर खड़े हो जाओ। जब वे तुम्हारी तरफ़ देखें तब

झुककर गुडमोर्निंग मैडम कहना और पूछना कि वह रूमाल उनका था या नहीं ?"

"बहुत ठीक कहा फिर ?"

"अगर वह उस रूमाल को अपना कहे तब तो तक़दीर सिकन्दर समझना नहीं तो दुम दबाकर नौ दो ग्यारह हो जाना।"

इतने में एक जंकशन आ गया। रेल खड़ी हो गई। केतकी चुप-चाप उस डिब्बे से उतर कर ज़नाना डिब्बे में चली गई। चलते वक़्त इतना ज़रूर कह गई कि वे दोनों अव्वल दर्जे के बेहूदे थे।

रेल फिर चली। गोपाल ने मनोहर से कहा—"अब औरतों का राज आनेवाला है। मर्दों ने जो कुछ मनमाना बर्ताव इन औरतों के साथ किया है उसका बदला मय ब्याज के ये औरतें चुकाएँगी। औरतों के डिब्बे में तो मर्द नहीं जा सकते लेकिन मर्दों के डिब्बे में औरतें आ सकती हैं और इतना ही नहीं, बेहूदा तक भी कह सकती हैं।"

मनोहर ने कहा—"न हो तो रेलवे पर मानहानि का दावा कर दिया जाय। अगर जीत गये तो गहरी रक़म हाथ लगेगी।"

गोपाल—"इसमें रेलवे की क्या ख़ता है ?"

मनोहर—"क्यों मर्दों के डिब्बे में औरतें घुस आती हैं ?"

"तो तुम औरतों से क्यों बोले ?"

"तुम तो संगदिल आदमी ठहरे। तुम से कुछ कहना ही

बेकार है। अगर वह और थोड़ी देर इसी डिब्बे में बैठी रह जाती तो मैं बेहोश हो जाता। ज़रा काली की तारीफ़ तो सुनलो :—

देख लो जामुन निराली रंग में काली हुई ;
दिल हुआ पागल अचानक आँख मतवाली हुई।
काली छबीली कालिका है प्रेम की है साधिका ;
हम कृष्ण हैं कलिकाल के काली हमारी राधिका।
राम काले कृष्ण काले रंग काला है भला ;
लैला रही काली बड़ी मजनूँ का जिसपर दिल चला।।
काली हमारी कोकिला है बन-बिहंगम राज्य में ;
काली हमारी नैन-पुतली प्रेम के साम्राज्य में।
काले सभी विख्यात होंगे नित्य काले काम से ;
विख्यात कलकत्ता हुआ काली तुम्हारे नाम से।

मनोहर की कविता सुनकर गोपाल ने कहा—"चलो लखनऊ में फिर भेंट होगी। अच्छी तरह दिल की तमन्ना पूरी कर लेना।"

पाँचवाँ परिच्छेद

अपने मकान के सामनेवाले बग़ीचे में सुन्दर टहलता हुआ आसमान में निकलते हुए तारों को देख रहा था कि इतने में फाटक पर एक ताँगा आकर खड़ा हो गया। उसमें से एक युवती उतर पड़ी और सीधी मकान के अन्दर चली गई। सुन्दर ने नज़दीक जाकर देखा तो पहिचान गया कि वे कुमारी केतकी देवी थीं। सुन्दर को देखते ही केतकी ने पूछा—"जीजा जी कहाँ हैं?"

सुन्दर ने जवाब दिया—"अपने कमरे में लेटे हुए हैं।"

केतकी—"यह लेटने का कौन सा समय है?"

सुन्दर—"तबियत ठीक नहीं है। जब से भाभी मरीं तब से उनकी यही हालत है। ज़्यादातर अपने कमरे में ही रहते हैं।"

केतकी—"क्या मेरे आने से भी उनकी हालत में कुछ भी सुधार न होगा? चलो देखें तो सही।"

"क्यों न होगा" कहता हुआ सुन्दर मदन के कमरे की ओर चल पड़ा। उसके पीछे पीछे केतकी भी चल पड़ी।

वहाँ पर जाकर देखती है कि मदन उदास भाव से लेटे हुए कमरे की छत की ओर ताक रहे हैं। चेहरा एकदम उतरा हुआ

है। कोई भी चीज़ ठीक ठिकाने से नहीं है। केतकी को देखते ही उनकी आँखों में आँसू भर आये। किसी तरह अपने आँसुओं को रोक कर उन्होंने केतकी को पास में पड़ी हुई कुर्सी पर बैठाकर कहा—"प्राण तो निकल गये ; अब सिर्फ़ अधजली देह बाक़ी रह गई है !"

केतकी ने समझाने की कोशिश करते हुए कहा—"जीजा जी! अगर देह बाक़ी रह गई है तो फिर उसमें नये ढंग से प्राण-प्रतिष्ठा की जा सकेगी। पिंजड़ा अगर ठीक है तो कहीं न कहीं से फिर कोई चिड़िया आ जायगी। मन्दिर अगर क़ायम है तो एक देवी की जगह दूसरी देवी भी बैठाई जा सकती है। जीजा जी, आप उदास क्यों होते हैं ?"

"क्या मेरी निर्मला फिर से मुझे मिल जायगी ?"

"यह तो अपने अपने ख़्यालात हैं। जब दुनिया में लोग एक मिट्टी के पुतले में ईश्वर को मानकर उसकी पूजा करते हैं तब क्या ईश्वर की ही बनाई हुई किसी मूर्ति में आप निर्मला को नहीं पा सकेंगे ? अगर आप में निर्मला है तो दुनिया के कण-कण में आपको निर्मला ही दिखाई पड़ेगी। इसीलिए मैं कहती हूँ कि निर्मला न सही, निर्मला की मूर्ति ही सही। आख़िर दिल की तसल्ली के लिए कोई न कोई तरीक़ा काम में लाना ही पड़ेगा। इसके अलावा मर्दों के लिए तो ऋषियों ने ख़ास ख़ास अधिकार दे रखे हैं जिन्हें भी ऐसे ही अवसरों पर काम में लाया जाना मुनासिब है।"

"मुझे विशेष अधिकारों की ज़रूरत नहीं है।"

"आप कहते क्या हैं?"

"सच कहता हूँ। मेरे जितने भी अधिकार थे वे सब निर्मला के साथ साथ ख़तम हो चुके हैं। हँसी-खुशी की दुनिया में जो कुछ अमन-चैन हासिल हो सकता था वह सब निर्मला के जीवन के साथ साथ हमेशा के लिए चल बसा। प्रेम-साम्राज्य का स्वच्छंद विहार निर्मला के प्राणों के साथ अनन्त में विलीन हो गया। केतकी! मेरे सुख के बग़ीचे में अब कोई भी ऐसा फूल नहीं रह गया है जिसे कि किसी दूसरी देवी को प्रेम के उपहार में भेंट किया जा सके।"

केतकी ने चाहा कि वह कुछ और कहे लेकिन मदन ने उसे रोकते हुए कहा—"समझदारों की दुनिया में समझाने वालों की कमी नहीं है लेकिन मेरा दिल इतना नासमझ हो गया है कि उसकी समझ में कुछ आता ही नहीं। कोई गीता के श्लोकों से समझाने की कोशिश करता है तो कोई उपनिषद् का सहारा लेता है। पर अफ़सोस है कि मेरे दिल पर किसी का असर नहीं पड़ता। एक निर्मला के साथ साथ मेरी सारी समझ भी चली गई। मेरी तक़दीर का चमकीला सितारा ही जब डूब गया तब बेकार दूसरे सितारों की ओर ताकने से लाभ ही क्या है?"

इतना कहकर मदन ने सुन्दर से कहा—"केतकी के खाने-पीने का इंतज़ाम ठीक ढंग से कर देना। किसी बात की तकलीफ़ न होने पाये।"

"अच्छी बात है" कहकर सुन्दर वहाँ से चला गया। उसके चले जाने के बाद केतकी ने मदन से फिर कहा—"अब आप ज़्यादा ग़मगीन न हों। दुनिया में जो आया है वह एक न एक दिन ज़रूर जायगा। न कोई किसी के साथ आया है और न कोई किसी के साथ गया है। फिर आप क्यों इतना उदास हो रहे हैं?"

"केतकी! निर्मला देवी थी। लक्ष्मी थी। आदर्श बहू थी। प्रेम की जीती जागती तसवीर थी। स्नेह की गंगा थी। नीले आकाश के पूर्ण चन्द्र की निर्मल चाँदनी थी और मुझ भाग्य हीन के लिए तो सब कुछ थी। केतकी! तुम्हीं बताओ, निर्मला में कौन-सा गुण न था?"

इतना कह चुकने के बाद मदन ने केतकी से भोजन आदि करने के लिए जाने को कहा। केतकी वहाँ से चली गई। उधर सुन्दर केतकी के लिए रास्ता देख रहा था। केतकी को आती हुई देखकर सुन्दर बड़ा ख़ुश हुआ। मालूम नहीं कि उसके ख़ुश होने का सबब क्या था।

जब केतकी पास आ गई तब सुन्दर ने कहा—"कौन जानता था कि मुझ सुन्दर को भी केतकी के लिए भी इंतज़ार करना पड़ेगा।"

"अपनी अपनी ज़रूरतें इंतज़ार करा ही लेती हैं इसमें मेरे ऊपर तुम्हारा कोई अहसान नहीं है।" कहती हुई केतकी कुर्सी पर बैठ गई।

"बाग़े बहार, उम्र में हासिल न हुआ जिसको,
आई न समझ आजतक क़ातिल बताये किसको;
बुतों के लिए मुफ़्त में मन्दिर न बनाया,
रूठी हुई बुलबुल को जिसने न मनाया।
हालाते दिल हैं पाक साफ़ होते न बेक़रार।
फिर भी मुझे मिल गया है लुत्फ़े इन्तज़ार॥"

सुन्दर की तुक्कड़ी शायरी सुनकर केतकी ने मुस्कुराते हुए कहा—"ओह! तुम इतने बड़े शायर हो गये हो?"

"यह तो मेरे एक दोस्त की बनाई हुई शायरी है। अगर मेरी शायरी सुनोगी तो दंग रह जाओगी।"

"अच्छा, यह कमाल हासिल कर लिया है?"

"बनारस में थोड़े ही रहता हूँ कि गंगा जी के किनारे बैठ कर मेंडकों का शिकार किया करूँ। मैं लखनऊ में रहता हूँ। किसी मामूली शहर में नहीं रहता। यहाँ दिमाग़ हमेशा नवाबी के हवाई जहाज़ पर दुनिया की हवा खाया करता है।"

"ज़रा अपनी शायरी भी तो सुनाओ।"

"खाना खा लो फिर।"

"नहीं, मैं अभी सुनूँगी।"

"मैं इस वक्त बिलकुल तैयार नहीं हूँ।"

"तो मैं खाना ही नहीं खाऊँगी।"

"मेरी शायरी इतनी अच्छी नहीं है।"

"आख़िर तुम्हारी तो है ही।"

"बेशक।"

"जब तुम्हारा नाम सुन्दर है तब शायरी भी सुन्दर होगी।"

"शायद।"

"तो फिर सुनाते क्यों नहीं? क्या कुछ इनाम चाहते हो?"

सुन्दर के जी में कुछ जवाब तो आया लेकिन वह चुप हो गया। उसे चुप देखकर केतकी ने कहा—"बोलते क्यों नहीं?"

"कौन सी शायरी सुनाऊँ यही सोच रहा हूँ।"

"जो तुम्हें बहुत रद्दी जँचती हो उसीको सुना दो।"

"अच्छी बात है।" इतना कह कर सुन्दर शायरी सुनाने लगा।

"सूरज न था, चाँद न था, थे न सितारे;
बादल न आसमाँ में थे चादर पसारे।

नूरे चश्म चौंध गया बिजली की चमक से;
सर हमारा औंध गया छत की धमक से।

बेला गुलाब चमेली फ़ौरन झुरा गई;
लेकिन बहारे केतकी दुनिया में छा गई।"

केतकी ने कहा—"बहुत बढ़िया है। अब बहारे केतकी ही देखा करना।"

"सब कुछ क्या आज ही कह डालोगी। कुछ दूसरे दिन के लिए भी तो रख लो। तारीफ़ तो यही है कि तारीफ़ का ख़ज़ाना ख़ाली न रहे।"

"तुम बड़े बातूनी हो गये हो।"

"तो क्या गूंगा बन जाऊँ? अच्छा यही सही।" कहकर सुन्दर चुप हो गया। और खाने-पीने का सामान लाकर रखने के लिए नौकर से कहा।

केतकी खाना खाने बैठ गई। उसने सुन्दर को बहुत बुलाना चाहा लेकिन वह बोला ही नहीं। केतकी ने फिर पूछा—"अगर मैं रूठ जाऊँ तो तुम क्या करोगे? मुझे मनाओगे या नहीं?"

सुन्दर ने कुछ भी जवाब न दिया। मानों उसने सुना ही न था। केतकी ने फिर कहा—"अगर मेरे लिए तुम्हें बाज़ार से मिठाई लेने जाना पड़े तो जाओगे या नहीं?"

सुन्दर फिर भी चुप। केतकी ने फिर कहा—"अगर मैं इसी दम बनारस के लिए चल पड़ूँ तो तुम क्या करोगे?"

सुन्दर की जीभ टस से मस न हुई। केतकी ने फिर बड़े ही मीठे स्वर से कहा—"सुन्दर! तुम क्या बुरा मान गये?"

सुन्दर शान्त बना रहा। केतकी ने खाना बन्द कर दिया और कहने लगी—"अगर तुम नहीं बोलते तो मैं इसी दम जाती हूँ।"

सुन्दर ने काग़ज़ के एक टुकड़े पर लिख कर जवाब दिया:—

"जाते हैं मुसाफ़िर सभी जिनका न ठिकाना;
लेकिन बताते हैं वे कोई भी बहाना।"

"अपनी ये शायरी बन्द करो। अच्छा यह तो बताओ कि जीजा जी को समझाने के लिए किस तरह कोशिश की जाय?"

इस बार सुन्दर ने अपनी जीभ को आज़ाद करते हुए कहा—

"मैं तो भैया को समझाते समझाते थक गया लेकिन उनकी समझ में कुछ आता ही नहीं।"

"सच्चे प्रेमी ऐसे ही हुआ करते हैं। प्रेम जिसके दिल पर बैठ जाता है वह फिर दुनिया में प्रेम ही प्रेम पाता है। प्रेम का पुजारी विषयी नहीं होता। जिसके दिल पर प्रेम की लता पनपने लगती है उसमें फिर विश्वासघात की कँटीली झाड़ी का नाम तक भी नहीं रह जाता। सुन्दर! प्रेम का तपस्वी रूप और सुन्दरता के सामने न तो अपना सर ही झुकाता है और न अपने रास्ते से ही डिगता है। यही बात जीजा जी की भी है।"

केतकी की बातों को सुनकर सुन्दर दंग रह गया। जिस केतकी को सुन्दर साधारण बालिका समझता था उसी से प्रेम का माहात्म्य सुनकर उसने कहा—"कौन जानता था कि केतकी भी हवा में डोलना सीख गई है?"

केतकी ने कहा—"प्रेम की दुनिया पाक है। जो पाक है उसे प्रेम की दुनिया अपना दिल देती है। प्रेम की दुनिया का दिल मिलते ही भगवान आप ही आप मिल जाते हैं। जब भगवान मिलते हैं तब सुख आप आ जाता है।"

सुन्दर—"क्या तुम यह बता सकती हो कि दुनिया में पाक कौन है?"

केतकी—"सच्चे ग़रीब। जिनका कि कोई सहारा नहीं है।"

सुन्दर—"तो फ़िर मैं भी ग़रीब बनने की कोशिश करूँगा।"

केतकी—"अच्छी बात है।"

छठा परिच्छेद

मनोहर और गोपाल उस रात को मदन के यहाँ न जा कर लखनऊ के एक धर्मशाले में ठहर गये। दूसरे दिन सवेरा होते ही मनोहर ने गोपाल से कहा—"ज़रूरी काम से मुझे तुम्हारा साथ छोड़ना पड़ रहा है। दो दिन के बाद फिर मिलूँगा अगर तुम यहीं पर रहोगे तो।"

"आख़िर जा कहाँ रहे हो? कुछ पता ठिकाना बताओगे या यों ही जिधर जी आया उधर सनक गये।"

गोपाल की बातों को सुनकर मनोहर ने कहा—"अगर पता ही बतलाना होता तो बता देता। ख़ैर, जब तुम पता जानना ही चाहते हो तो सिर्फ़ इशारे से बतलाता हूँ। समझो या न समझो। मैं उत्तर की ओर जा रहा हूँ और वह भी इसी गाड़ी से।"

गोपाल ने पूछा—"मदन से कब मिलोगे?"

मनोहर—"जब फिर कभी लखनऊ आऊँगा।"

"जैसा ठीक समझो वैसा करो। मुझे किसी बात की शिकायत नहीं है लेकिन इतना याद रखना कि यह लखनऊ है। क़दम क़दम पर फिसलने का डर है। चलना तो सम्हल कर; नहीं फिर पछताओगे।"

"लखनऊ में अगर फिसल गये तो हर्ज क्या है। आख़िर

इन्सान ही तो ठहरे। कहाँ तक सम्हल कर चलेंगे? जब ओखली में सर डाल दिया है तब मूसलों से डरने से लाभ?"

"मेरी तो यही राय थी कि तुम कहीं न जाते क्यों कि तुम नाज़ुक क़दमवाले इन्सान ठहरे; मालूम नहीं किस जगह फिसल कर गिर पड़ो और बेकार परेशान होना पड़े।" इतना कहकर गोपाल ने मनोहर को रोकने की कोशिश की।

मनोहर को गोपाल की एक भी बात पसंद न आई। वह अपना सामान लेकर ताँगे पर सवार हो गया और स्टेशन की ओर चल पड़ा। गोपाल भी मदन के मकान की ओर चलने की तैयारी में लग गया। एक ताँगे पर बैठकर वह भी लालबाग़ को चल पड़ा।

फाटक पर ताँगे को खड़ा करके वह सीधा मदन के कमरे में जा पहुँचा। उस समय मदन निर्मला की लिखी हुई फुटकर कविताओं के संग्रह का पाठ कर रहा था। अपने दोस्त गोपाल को आया देखकर वह फौरन उठा और बड़े प्रेम के साथ उसकी आवभगत की। चाय, पानी, पान, पत्ती बात की बात में सामने आ गई।

गोपाल ने मदन से कहा—"स्वागत करना लखनऊवाले जैसा जानते हैं वैसा शायद ही किसी दूसरी जगह के लोग जानते होंगे।"

"इस तारीफ़ के लिए मैं तुम्हें दिल खोल कर धन्यवाद देता हूँ।"

इतना कहकर मदन ने गोपाल की ओर ऐसी निगाह से देखा मानों वह उससे कुछ पूछना चाहता हो और इसके साथ ही साथ यह भी चाहा कि मित्र के साथ मन बहलाव के लिए दो चार बातें की जायँ लेकिन यह सब ख़्यालात दिल में ही पैदा हुए और दिल में ही खतम हो गये। दिल के सूनेपन में कुछ भी क़ायम न रह सका।

गोपाल ने मदन से कहा—"और कब तक मातम मनाओगे? भाई यह तो दुनिया का वह रास्ता है जिसमें आना-जाना लगा ही रहता है। मानता हूँ कि तुम्हारे दिल में सच्चा प्रेम है लेकिन सच्चा प्रेम यह नहीं कहता कि तुम हमेशा उदास ही बने रहो।"

निर्मला की लिखी हुई फुटकर कविताओं को दिखाकर मदन ने कहा—"प्रेम क्या है यह तो मैंने जाना ही नहीं। अगर इतना ही जान जाता तो फिर आज यह नौबत क्यों आती? यह तो अंधे दिल का नाहक़ पागलपन है जिसकी वजह से मुझे दुनिया में अँधेरा ही अँधेरा दिखाई पड़ रहा है। कुछ सूझता ही नहीं।"

गोपाल ने साधारण ढंग से जवाब दिया—"फिर भी इतने अँधेरे में रहना भी ठीक नहीं जहाँ कि प्रेम अपना उजाला तक भी न दिखा सके।"

"जिस समय निर्मला की लिखी हुई कविताएँ सामने आ जाती हैं उस समय दिल की आग भीतर ही भीतर समझ की दुनिया को जला कर ख़ाक में मिला देती है और मुझे पागल बना देती है। निर्मला जैसी पत्नी का मिलन पूर्व जन्म की कठिन

तपस्या का मीठा फल था। मालूम नहीं ; मेरा यह सुख ईश्वर से क्यों न देखा गया।"

"निर्मला कविता लिख लेती थी। शायद इसीलिए तुम उसे अधिक चाहते थे। घबड़ाते क्यों हो, मैं तुम्हारे लिए उससे बढ़कर कविता लिखनेवाली की खोज करता हूँ। बेकार दिल के अरमानों पर पानी फेरते रहना अच्छा नहीं है। जब प्रेम का मन्दिर ख़ाली हो गया है तब उसमें किसी न किसी देवी को बैठाना ही ठीक है। मन्दिर को ख़ाली रख छोड़ना ही बड़ा ख़राब है।"

"कहते तो ठीक हो लेकिन न तो अब मेरा वह दिल है और न दिल में वह प्रेम का मन्दिर है। निर्मला के साथ साथ सब कुछ खो गया। मैं कविता-प्रेमी भी नहीं हूँ। चूँकि इन कविताओं में भी निर्मला का दिल छिपा हुआ है इसीलिए इनमें मैं उसके दिल को पाने के लिए दिनरात कोशिश किया करता हूँ।"

"अगर तुम इसी तरह अपने दिन बिताते रहे तो फिर तुम्हारे जितने भी मंसूबे थे वे एक भी पूरे न हो सकेंगे। देश में मज़हब के नाम पर जो ख़ून की नदियाँ कभी कभी बहने लगती हैं उनके रोकने के लिए तुम्हारा जो इरादा था क्या उसे तुम भूल गये? मदन! देश को, समाज को और कुल दुनिया को तुम्हारी सेवा की बड़ी ज़रूरत है।"

"इसके लिए मैं हर समय तैयार हूँ। यही तो निर्मला के मिलन का बढ़िया उपाय है। मैं इससे कभी मुँह नहीं मोड़ सकता।"

"तुम क्या कह गये यह मेरी समझ में नहीं आया।"

"निर्मला देवी थी। देवी से तभी मिला जा सकता है जब कि मैं अपने को देवता के समान बना लूँ। जिस दिन मुझमें देवताओं के बराबर दुनिया की भलाई करने की ताक़त आ जायगी उस दिन मेरी निर्मला आप आकर मुझसे मिल लेगी। दुनिया में क़दम क़दम पर इम्तहान ही तो होते रहते हैं। अगर मैं सब में कामयाब हो गया तो प्रेम के राज्य में मुझे राजा का और निर्मला को रानी का आसन ज़रूर मिलेगा। दुनिया के दिल में हम होंगे और हमारे दिल में दुनिया होगी। राहे मुहब्बत की फ़क़ीरी में कामयाबी हासिल होती ही है।"

मदन की बातों में उम्मीदों की बसी हुई दुनिया देखकर गोपाल ने कहा—"मुझे तुम्हारी इन बातों को सुनकर बड़ी ही ख़ुशी हुई। सच कहा जाय तो इस समय तुम्हारे ख़्यालात बहुत ही ऊँचे दर्जे के हैं।"

मदन ने साधारण ढंग से कहा—"घर में जिस ओर देखता हूँ उसी ओर मुझे निर्मला की पैरों की आवाज़-सी सुनाई पड़ती है। बग़ीचे में जब जाता हूँ तब हर एक फूल में मुझे निर्मला की ही रूह खिली हुई हालत में दिखाई पड़ती है। लताओं के मंडप में मुझे निर्मला की ही ठंढी छाया का अनुभव होता है। जिधर देखता हूँ उधर ही निर्मला मिल जाती है। फिर जुदाई कैसी! मैं इस दुनिया में हूँ और वह उस दुनिया में! लेकिन हम दोनों एक दूसरे के दिल को समझ तो लेते ही हैं।"

"ख़ैर, अब इन सब बातों को छोड़ो। अच्छा यह तो बताओ कि अभी कुछ दिन लखनऊ में ही रहोगे या और कहीं जाने का इरादा है ?"

'निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम के लिए तैयारी करनी है। कुछ सामान ख़रीदने कानपूर ज़रूर जाऊँगा। इसके बाद कहाँ जाऊँगा यह तय नहीं है।"

"यह तो बड़ा ही अच्छा काम है। मैं भी एक ऐसा ही आश्रम खोलना चाहता था लेकिन रुपये-पैसे की कमी होने से न खोल सका।"

"इसीको ही तुम अपना समझ लो और इसके चलाने में हमें मदद दो। जब सेवा ही करनी है तब किसी न किसी तरीक़े से कर सकते हो।"

"इसके लिए मैं हर एक तरह से तैयार हूँ।"

"तो आज से तुम इस संस्था के सेक्रेटरी बनाये गये।"

"यह तो बड़े ही सौभाग्य की बात है।"

इतने में केतकी आ पहुँची। वह बाहर खड़ी इन दोनों की बातों को बड़े ही ध्यान से सुन रही थी लेकिन इन दोनों को कुछ भी पता न था। गोपाल की बातों को सुनकर उसने कहा—"अनाथ-महिला-आश्रम के लिए क्या कोई दूसरा सेक्रेटरी मिलता ही न था जो इन्हें यह काम सौंपा गया है ?"

मदन ने चौंक कर कहा—"आख़िर इतराज़ क्यों है ?"

केतकी ने जवाब देते हुए कहा—"इन सब बगुला भगतों से समाज की जैसी सेवा हो सकेगी वह मैं अच्छी तरह जानती हूँ। ऐसे सेक्रेटरियों को रखकर आश्रम का न खोलना ही अच्छा है। ये वे गिद्ध हैं जो कि अनाथ महिलाओं की सेवा करना तो दूर रहा उनका माँस तक भी नोच कर खा जायँगे। महिलाओं की संस्था चलाने के लिए किसी महिला को ही क्यों नहीं रखते? क्या उससे सेवा न हो सकेगी?"

गोपाल ने चाहा तो जरूर कि केतकी को अच्छे ढंग से जवाब दे लेकिन मदन के सामने साहस न हुआ। केतकी ने मदन से फिर कहा—"जीजा जी, निर्मला जीजी के लिए आप जिस आश्रम को खोलना चाहते हैं उसमें काम करनेवालों का चाल-चलन बहुत ही पाक-साफ़ होना ज़रूरी है। अगर ऐसा न हुआ तो फिर बड़ी बदनामी की बात होगी।"

मदन ने मुस्कुराते हुए कहा—"तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। सच-मुच तुम बड़ी समझदार लड़की हो।"

गोपाल ने मदन से कहा—"बड़ी ही समझदार हैं। मुझे और मनोहर को लखनऊ पहुँचने के पहले ही बेहूदेपन का सार्टीफ़िकेट दे चुकी हैं।"

केतकी ने हल्के ग़ुस्से के साथ कहा—"जब देखो तब पराई स्त्रियों से बातें करने के लिए जीभ लपलपाते रहते हैं और बेहूदेपन से चिढ़ते हैं? शर्म नहीं लगती! ज़रा-सी बुलबुली

दुरुस्त करली, हैट, कोट पेण्ट से देह को ढक लिया और बन गये शरीफ़ों के सर्दार !" कहती हुई केतकी चली गई।

उसके चली जाने पर मदन ने गोपाल से कहा—"यह बड़ी चिलबिली लड़की है फिर भी दिल की साफ़ है। किसी भी बात के लिए बुरा न मानना।"

गोपाल—"नहीं, नहीं, बुरा मानने की कौन सी बात है ? गुलाब की झाड़ी में न सही केतकी के पत्तों में ही दिल बहल गया। घाव तो कभी न कभी कहीं होता ही।"

सातवाँ परिच्छेद

लखनऊ में फ़िल्म कम्पनियों की जब से बाढ़ आई तब से न जाने कितने नवयुवक और नव युवतियाँ लखनऊ की सड़कों की धूल छानने लगीं। सब के सब कभी इस कम्पनी में आते और कभी उस कम्पनी में जाते। उन कम्पनियों के जो डायरेक्टर थे वे युवतियों से तो मिलने की कृपा करते लेकिन युवकों से मिलने की उन्हें तनिक भी इच्छा न होती।

हमारा पूर्व परिचित मनोहर भी उस दिन झूठ कहकर गोपाल से जुदा हो गया और अपनी हवस को पूरी करने की कोशिश करने लगा। वह यह चाहता था कि किसी कम्पनी में वह या तो कहानी लेखक की हैसियत से भर्ती कर लिया जाय या एक्टर ही बना लिया जाय। गया तो वह सब कम्पनियों में लेकिन कहीं भी उसे जगह न मिली। बेचारा उदास हो गया। लखनऊ की चहल-पहल उसे फीकी मालूम होने लगी।

ख़ुश क़िस्मती से इन्हीं दिनों लखनऊ में एक नाटक कम्पनी आई हुई थी। उसका बड़ा नाम था। मनोहर उसी कम्पनी के मैनेजर से मिलने को चला। जाते ही उसके मैनेजर से भेंट हो गई। मनोहर को देखते ही उसने पूछा :—

"क्या आप नाटक तैयार कर सकते हैं?"

"जी हाँ, बख़ूबी।"

"अभी तक आपने किसी नाटक की रचना की है?"

"कम से कम पन्द्रह नाटक लिख चुका हूँ।"

"फ़िलहाल आपने किस नाटक की रचना की है?"

"मैंने हाल में जिस नाटक को तैयार किया है उसका नाम सुनेंगे तो आप की तबियत ख़ुश हो जायगी।"

"बड़ी ख़ुशी की बात है।"

"नाटक का नाम है 'दिल की तमन्ना'।"

"सचमुच आपने नाम बहुत बढ़िया रखा है। जरा नमूना तो दिखाइए।"

"अच्छी बात है" कहकर मनोहर ने अपना लिखा हुआ नाटक मैनेजर को दे दिया। दो चार पन्ने देख चुकने के बाद मैनेजर ने मनोहर से कहा :—

"आप का नाटक अभी मँजा नहीं है।"

"काट छाँट करके ठीक कर दूँगा। अभी आप तर्ज़ भर देखें।"

"अच्छा यह तो बताएँ कि इस नाटक में आप किसका पार्ट कर सकेंगे?"

"जिस किसी का पार्ट मैं कर सकूँगा।"

"अच्छा आप इस नाटक की क़ीमत क्या लेंगे?"

"सिर्फ़ आपकी दिली मेहरबानी और कुछ नहीं।"

"आपने अपने नाटक में गाने क्यों नहीं बैठाये?"

"आजकल लोग नाटकों में गानों का होना ठीक नहीं समझते।"

"लेकिन हम लोग तो ठीक समझते हैं।"

"मैंने तो पहले यह तय कर रखा था नाटक और उपन्यासों में कविता, और गाने दोनों ही होने चाहिए। पर क्या करता, मशहूर लेखकों ने सब गुड़ गोबर कर दिया और लाचार होकर मुझे अपना वह तरीक़ा बदलना पड़ा।"

"आप नाटक और उपन्यासों को क्या समझते हैं?"

"नाटक और उपन्यास मनुष्य के जीवन के सच्चे चित्र हैं।"

"क्या मनुष्य गाता नहीं है?"

"क्यों नहीं गाता?"

"फिर गाने क्यों दूर करने की आपने ठान ली है?"

"मैं अपनी ग़लती को सही कर दूँगा। आप घबड़ाएँ नहीं।"

इस तरह उन दोनों का साथ हो गया। मनोहर इस बात से ख़ुश था कि उसे मनचाहा काम मिल गया और नाटक कम्पनी का मैनेजर इसलिए ख़ुश हुआ कि मुफ़्त में एक नाटक लेखक मिल गया।

उसी नाटक कम्पनी में एक एक्ट्रेस थी। उसका नाम प्रतिभा था। जैसी वह सुन्दर थी वैसी ही वह अपने काम में चतुर थी। थोड़ी ही देर में उसका मनोहर से परिचय हो गया। मनोहर ने उससे यह जानना चाहा कि वह किस तरह इस नाटक कम्पनी में आई। क्या वह भी नाटक लिख लेती है?"

प्रतिभा ने मनोहर को शायरी में जबाब दिया :—

"दिले अरमान की तह में छुपे रुस्तम सभी निकले ;
मुहब्बत की कटारी ले मगर हम तो अभी निकले।
न पूछो हाल इस दिल का बुता है अब बहुत जल कर ;
न जाने और क्या देखें अजी आगे ज़रा चलकर।"

मनोहर समझ गया कि प्रतिभा को शायरी बहुत पसन्द है। उसने भी अपने को कम न समझा। शायरी का जवाब उसने भी शायरी में ही दिया :—

"मुहब्बत की कटारी गर हमारा क़त्ल कर देती ;
दिले अरमान मिट जाते हमें अपना ही कर लेती।
न पूछें हाल क्यों दिल का अगर क़ाबू में दिल अपना ;
बदा जो है वही होगा मिलायें क्यों न दिल अपना।"

प्रतिभा ने कहा—

"अगर क़ाबू में दिल होता न जलता फिर यह परवाना ;
न लैला के लिए मजनूँ कभी होता भी दीवाना।
तुम्हारा दिल तुम्हारा है हमारा दिल हमारा है ;
मिले यह ग़ैर मुमकिन है तुम्हारा दिल अवारा है।"

मनोहर—"शमा जलने न पाये बस इसीसे जलता परवाना ;
कहीं लैला न गुम जाये हुआ मजनूँ भी दीवाना।
हमारा दिल तुम्हारा है तुम्हारा दिल हमारा है ;
सभी क़ायम ठिकाने पर कहो मत यह अवारा है।"

प्रतिभा—"अगर होते ठिकाने पर न दर्दे दिल कभी होता ;
सभी आज़ाद हो जाते न बहता ख़ून का सोता।
.ख़ुदा के नाम पर जब हम .ख़ुदा का दिल दुखाते हैं ;
ज़ुबाँ पर तब मुहब्बत रख कटारी ही चुभाते हैं।"

मनोहर—"कटारी गर चुभाते हैं मुहब्बत है भरी उसमें ;
दिले अरमान की तह में मुहब्बत की तरी उसमें।
जिन्हें पहचान दिल की है वही दिल को मिलाते हैं ;
दिखा नूरे मुहब्बत को गुले दिल को खिलाते है।"

प्रतिभा कुछ कहने ही जा रही थी कि इतने में नाटक कम्पनी का मैनेजर आ पहुँचा और मनोहर से बोला—"आप अच्छे शायर भी हैं यह जानकर मुझे बड़ी .ख़ुशी हासिल हुई लेकिन इन देवियों की ख़िदमत करते करते कहीं आप अपने को न भूल जायँ क्योंकि नाटक कम्पनियों में फिसलने की यही एक ख़तरनाक जगह है।"

"नाक ख़तरे में न पड़े बस इतना ख़्याल तो ज़रूर रखना पड़ेगा।" मनोहर ने मुस्कुराते हुए मैनेजर की बातों का जवाब दिया।

प्रतिभा ने कहा—"जो सम्हल कर न चलेगा उसको कौन कब तक सम्हालेगा ?"

मैनेजर ने कहा—"कोई न कोई तो मददगार हो ही जायगा। इसके अलावा जब तक पतित-पावन परमेश्वर की प्रतिभा का

आशीर्वाद साथ देगा तब तक डर किस बात का है ? फिसलेंगे भी तो गिरते गिरते बच जायँगे।"

मनोहर ने बड़ी ख़ुशी के साथ कहा--"आपका कहना बहुत ठीक है। जब तक प्रतिभा का साथ है तब तक गिरने में भी स्वर्ग का सुख मिलता रहेगा।"

"फिर भी प्रतिभा का रास्ता निराला रहेगा।" कहती हुई प्रतिभा वहाँ से चली गई।

उसके जाने के बाद मनोहर ने मैनेजर से कहा—"आपकी यह एक्ट्रेस बड़ी भली मालूम होती है। मैं तो देखते ही देखते इसका भक्त बन गया हूँ।"

मैनेजर—"बदौलत इसके ही हमारी यह नाटक कम्पनी चल रही है। सच कहा जाय तो इस नाटक कम्पनी की ज़िन्दगी इसी पर क़ायम है। मेरी राय में तो यह आता है कि इसके लिए प्रतिभा नामक एक नाटक की रचना की जाय और फिर वह नाटक खेला जाय। प्रतिभा भी ख़ुश होगी और रुपया भी मिलेगा।"

"मुझे भी आपकी राय बहुत पसंद है। मैं बहुत जल्द ऐसा ही एक नाटक तैयार करता हूँ। आपकी तबियत ख़ुश हो जायगी।"

आठवाँ परिच्छेद

"मेरे विचार से निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम के लिए अगर कोई तीर्थस्थान ठीक समझा जाता तो बहुत अच्छा होता।" गोपाल ने मदन से कहा :—

"अगर लखनऊ में ही खोला जाय तो क्या हानि है?" मदन ने जवाब दिया :—

"अकसर यह देखा गया है कि भले घराने की औरतें समाज के शैतानों की बदौलत तीर्थों में ही लाई जाती हैं और वहीं अनाथ बनाकर छोड़ दी जाती हैं। उस समय उनका कोई साथी न रहने से वे मुसीबत में पड़ जाती हैं और बाद में उनकी जो हालत होती है उसका ज़िक्र करना भी कठिन हो जाता है। अगर वहीं कोई अनाथ-महिला-आश्रम हुआ तो आसानी से उनकी मुनासिब मदद की जा सकती है और कोई भी उन्हें आश्रम तक पहुँचा सकता है। इस तरह उन ग़रीबों की भलाई हो जायगी।"

"कहते तो ठीक हो लेकिन········।"

"जब ठीक है तब लेकिन क्या?"

"लेकिन उतनी दूर आश्रम खोलना और उसकी देख-भाल करना कठिन होगा।"

"कठिन कुछ भी नहीं है बस इरादा भर कर लो।"

"अच्छी बात है। तुमने कौन-सा तीर्थ पसंद किया है ?"

"मेरी समझ में तीर्थराज प्रयाग अच्छा होगा।"

इतने में सुन्दर वहाँ आ पहुँचा। उसे अपने पास बिठाकर मदन ने कहा—"गोपाल की राय है कि निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम की नींव तीर्थराज प्रयाग में डाली जाय क्यों कि वहाँ पर आश्रम के खुल जाने से अनाथ औरतों की भलाई आसानी से की जा सकेगी। तुम्हारी क्या राय है ?"

"मुझे यह बिलकुल पसंद नहीं है।"

"क्यों ?"

"मेरी समझ में लखनऊ में ही यह आश्रम खोलना अच्छा होगा क्यों कि अगर यहाँ पर यह खुल गया तो इसकी देख-रेख आसानी से की जा सकेगी। दूर होने पर हम लोगों को हर एक हालत में दूसरों के ही भरोसे रहना पड़ेगा।"

गोपाल ने सुन्दर को समझाते हुए कहा—"मेरा मतलब यह था कि तीर्थों में ही लोग औरतों को अनाथ बनाकर छोड़ जाते हैं और वे दूसरे धर्मवालों के चंगुल में पड़ कर अपना दीन खो बैठती हैं और हम हिन्दुओं को दिन रात कोसा करती हैं। इसीलिए मैंने यही ठीक समझा कि अस्पताल वहाँ हो जहाँ कि मरीज़ों की तादाद काफ़ी हो।"

"मैं वह काम नहीं करना चाहता जिसमें मज़हबी झगड़ों की बू हो। आप को यह समझ रखना चाहिए कि दीन और

दुनिया को दूर कर सिर्फ़ राहे मुहब्बत पर चलना ही अच्छा होगा। जब हम भलाई करने के लिए मैदान में उतरे तब फिर क्या हिन्दू क्या मुसलमान हमें सभी की भलाई करनी चाहिए। जब हमारा ईश्वर मुसलमानों के ख़ुदा से जुदा नहीं है तब फिर हम क्यों मुसलमानों को अपने से अलग समझें।"

सुन्दर की बातों को सुनकर मदन ने कहा—"गोपाल! सुन्दर का कहना बहुत ठीक है।"

गोपाल ने दबी हुई आवाज़ से कहा—"मुझे भी बहुत ठीक जँचा।"

सुन्दर ने कहा—"मेरी समझ में जो आया मैंने कह दिया। आप लोग मानें या न मानें यह आप लोगों की मर्ज़ी पर है। मुझे तो सेवा करनी है।"

"अगर सलाह सही है तो क्यों न मानी जायगी?" गोपाल ने कहा।

"हमें तो भाभी के लिए एक स्मारक बनाना है। जहाँ पर भाभी की मृत्यु हुई है वहीं आश्रम भी खुलेगा। दूसरी जगह ठीक न होगा।"

मदन ने गोपाल से कहा—"मुझे तो सुन्दर की सलाह सोलहो आने सही जँच गई। अब मेरी भी समझ में आ गया कि आश्रम लखनऊ में ही खोलना अच्छा है।"

गोपाल ने समझाते हुए कहा—"कहीं भी आश्रम होगा वह स्मारक का काम देगा। जैसा लखनऊ वैसा प्रयाग। लेकिन अगर

दुनिया की भलाई करना है तो फिर अपने दिल को बड़ा बनाओ और लखनऊ व प्रयाग में भेद न समझो।"

सुन्दर ने जवाब देते हुए कहा—"मैं तो यह ठीक समझता हूँ कि जो काम किया जाय उसकी देख रेख अच्छी तरह करनी चाहिए। अनाथ-महिला-आश्रम कोई मामूली चीज़ नहीं है कि आसानी से देख-रेख हो जाया करेगी।"

गोपाल—"जो काम आप ही आप होते हैं वे कभी कठिन नहीं होते। साथ ही साथ जिसे काम करने का ढंग मालूम है वह हर एक काम को आसानी से सम्हाल लेता है चाहे अनाथ-महिला-आश्रम हो या और कोई काम; सभी जगह उसे आसानी हो जाती है। बस ढंग मालूम होना ज़रूरी है।"

"मुझ में बहस करने की ताक़त नहीं है। आजकल दुनिया की जैसी रफ़्तार है उसी को सामने रखकर मैंने अपनी राय ज़ाहिर की है। मैंने तो यह अच्छी तरह समझ लिया है कि जिस काम को मैं जिस दिलचस्पी से कर सकता हूँ उसी काम को मेरा कोई भी मित्र उतनी दिलचस्पी से नहीं करेगा। मैं अपने काम को कामयाब बनाने के लिए जी-जान से कोशिश करूँगा और मेरा मित्र सिर्फ़ मुझे ख़ुश करने के लिए और वह भी दिखावटी कोशिश करेगा। आश्रम में आई हुई औरतों की इज़्ज़त क़ायम रखते हुए उनकी सेवा का भार जितना हम लोगों पर होगा उतना हमारे किसी भी मित्र पर न होगा। आश्रम की बदनामी से हमारी बदनामी ज़रूर होगी लेकिन उससे हमारे

मित्रों की बदनामी होगी ऐसी कोई उम्मीद नहीं है क्योंकि इस आश्रम के साथ भाभी का नाम भी जुड़ा है। भाभी के नाम में धब्बा न आये यह हमारा फ़र्ज़ होना चाहिए। उनकी पाक यादगार में दाग़ लगाना ठीक न होगा। इन सब बातों को हमारे मित्र नहीं समझ सकेंगे चाहे उन पर पूरी ज़िम्मेदारी क्यों न छोड़ दी जावे।"

गोपाल का चेहरा पीला पड़ गया। मदन ने सुन्दर को समझाते हुए कहा—"फिर भी बिना मित्रों के ज़िन्दगी का लुत्फ़ ही हासिल नहीं होता। मित्रों में वह ताक़त होती है जो कि रेगिस्तान में भी हरे-भरे बग़ीचे तैयार कर सकती है; नरक को स्वर्ग बना सकती है, दिल में धधकती हुई बेचैनी की आग को बात की बात में ठंढी कर सकती है। मित्रों की थोड़ी सी हमदर्दी से ही पहाड़ पानी हो जाता है; बादलों की तड़प और बिजली की चमक में भी एक सुहावनी दुनिया दिखाई देने लगती है; मुसीबतों में भी दिल घबड़ाता नहीं है; साथ ही साथ भीतर ही भीतर एक ऐसी लहर पैदा हो जाती है जिससे कि दुनिया भर की हाहाकार में भी हमें निराला सुख मिल जाता है। मित्रों के मिलने का ढंग ऐसा जादू भरा होता है कि मिलते ही दुःख खो जाता है; उजड़ा हुआ संसार नये सिरे से हरा-भरा हो जाता है। मेरा तो यह विश्वास है कि मित्रों के भरोसे जितने भी अच्छे काम किये जाते हैं उन सब में ईश्वर का आशीर्वाद मिलता रहता है। मित्र ही एक ऐसे हैं जिन पर कि हम भरोसा कर

सकते हैं। दुनिया में उसी को नरक की आग में दिन-रात जलना पड़ता है जिसका कि कोई मित्र नहीं है। मुझे तो अपने मित्रों पर उतना ही भरोसा है जितना कि ईश्वर पर है।"

गोपाल का चेहरा दमक उठा। ख़ुश होकर उसने मदन से कहा—"तुमने तो लेक्चर ही दे डाला। ज़रा सी बात पर इतना कह डाला जिसकी कि हद नहीं।"

मदन—"दिल की बात थी। इशारे पर निकल आई। जब मैं दुनिया के एक नये रास्ते पर चलना चाहता हूँ तब फिर दिल को क्यों न साफ़ रखूँ?"

गोपाल—"बात तो तुमने इतने ऊँचे दर्जे की कही है कि क्या तारीफ़ करूँ? लेकिन अफ़सोस तो इस बात का है कि सुन्दर की समझ में कुछ भी नहीं आया। और अभी समझ में आ ही कैसे सकता है जब कि उतना तजुर्बा ही नहीं है।"

सुन्दर—"तजुर्बा जितना है वह सब पक्का है। दुनिया में सच्ची बात हमेशा ही कड़वी मालूम होती है लेकिन मैं सच कहता हूँ कि आजकल सच्चे मित्र मिलते ही नहीं और अगर मिलते भी हैं तो आगे चलकर अपनी सच्चाई क़ायम भी नहीं रख सकते। एक नहीं, सैकड़ों आदमी मित्रों की ही बदौलत चौपट हो चुके हैं।" इतना कहकर सुन्दर वहाँ से चला गया। गोपाल उसकी ओर ताकता ही रह गया।

मदन ने गोपाल से कहा—"है तो सुन्दर अभी थोड़ी ही उमर का लेकिन बातें बहुत ही ठीक ठिकाने से करता है। उसकी

एक एक बात मुझे सही मालूम पड़ रही है। अब मेरी भी राय है कि लखनऊ में ही आश्रम का खोलना मुनासिब है।"

"तो फिर मैं क्यों इसका विरोध करने लगा। रुपया तुम्हें लगाना है। जहाँ तुम ठीक समझो वहीं आश्रम खोल दो। काम सभी जगह चल सकता है।"

"अच्छा यह तो बताओ कि लखनऊ में तुम्हें किसी बात की तकलीफ़ तो न होगी?"

"यह भी क्या कोई पूछने की बात है?"

"फिर भी पूछने में बुराई ही क्या है?"

गोपाल ने अपनी ख़ुशी को जाहिर करते हुए कहा—"जब तक तुम साथ रहोगे तब तक भला तकलीफ़ किस बात की होगी?"

"लखनऊ में तकलीफ़ उसको होती है जिसे छुई मुई की बीमारी होती है। जिन को न दीन से मतलब और न दुनिया से, वे भला कब लखनऊ से घबड़ाने लगे"

कहती हुई केतकी आ पहुँची और मदन से बोली—"आप को इसलिए सम्हल कर रहना चाहिए कि लखनऊ में कुछ हमदर्द ठग आये हुए हैं। किसी न किसी दिन वे आपको लूट ले जायँगे और आप उनका कुछ भी न कर सकेंगे।"

केतकी की बातों से मदन को हँसी आगई। उन्हों ने उसकी पीठ ठोंक कर कहा—"तुम तो बड़ी होशियार हो गई हो। हरएक बात तजुर्बे से भरी रहती है। केतकी! सच कहता हूँ कि तुम्हारे

आने से घर का अँधेरा जाता रहा और फिर से नई रोशनी की झलक दिखाई पड़ने लगी। मेरा जीवन भी उदासी की दुनिया से बहुत दूर हट गया।"

"लेकिन मैं इसी ट्रेन से बनारस वापस जाने का इरादा कर चुकी हूँ क्यों कि छुट्टी पूरी हो चुकी है। फिर कभी आऊँगी। ख़तों का जवाब जल्दी दीजिएगा।"

"अच्छी बात है।" मदन ने जवाब दिया।

केतकी वहाँ से चली गई। सुन्दर उसको स्टेशन तक पहुँचाने गया। रेल के डिब्बे में बैठकर केतकी ने सुन्दर से कहा—"दो दिन के लिए तुम्हें बनारस बुलाऊँगी। आना ज़रूर नहीं तो फिर मैं कभी तुम्हारे यहाँ न आऊँगी। समझे?"

सुन्दर ने केतकी की ओर ताक कर कहा—"मैं ज़रूर आऊँगा। भला तुम बुलाओ और मैं न आऊँ? मुझे तो यही डर है कि कहीं तुम मुझे भूल न जाओ।"

"तुमको भूलूँगी? जिस सुन्दर ने बहारे केतकी पर अपनी शायरी सुनाने की मुझ पर मेहरबानी की है उसी सुन्दर को भूलजाऊँ यह मुमकिन नहीं है। हाँ इतना ज़रूर है कि तुम्हारे लिए पागल न बनूँगी क्यों प्रेम और स्नेह की दुनिया में पागलों की कहीं गुंजायश नहीं है।"

नवाँ परिच्छेद

धीरे धीरे तीन महीने बीत गये। मनोहर नाटक कम्पनी के साथ साथ अपनी ज़िन्दगी के दिन मौज से बिताने लगा। घूमती-घामती वह कम्पनी प्रयाग आ गई। प्रयाग आते ही नाटक कम्पनी के मैनेजर ने मनोहर से कहा—"प्रतिभा का क्या हाल है? कहाँ तक आपने उसे लिख लिया है और कितनी अब बाक़ी है।"

नाटक कम्पनी के मैनेजर एक बंगाली थे। उनका नाम मिस्टर ज्ञानेन्द्र मोहन चटर्जी था। बड़े ही भले और मिलनसार आदमी थे। बंगाली होने पर भी वे अच्छी हिन्दी बोल लेते थे। सातवें परिच्छेद में पाठकों को उनकी हिन्दी का नमूना मिल ही गया है। उनकी बातों को सुनकर मनोहर ने जवाब दिया—

"बस आख़िरी सीन बाक़ी रह गई है।"

"मैं प्रयाग में ही प्रतिभा नाटक को शुरू करना चाहता हूँ।"

"अच्छी बात है। जो कुछ बाक़ी रह गया है उसे भी शाम तक पूरा कर दूँगा।"

"ज़रा अपने नाटक का क़िस्सा तो सुनाइए।"

"क़िस्सा बहुत ही मामूली है। मैं तो यही ठीक समझता हूँ कि नाटक पूरा हो जाय तब आप इसे सुनने की मेहरबानी करें।"

"अगर अभी सुन लूँ तो क्या कोई हर्ज है?"

"अगर आप अभी सुनना चाहते हैं तो मुझे कोई इतराज़ नहीं है।"

"बड़ी ख़ुशी की बात है।"

"अच्छा इसकी शुरुआत देखिये। कैसा अच्छा लिखा गया है।"

दृश्य पहिला

[स्थान—जंगल। डाकुओं का सरदार अपने साथियों से कह रहा है।]

सरदार—"मैं क्यों डाकू बना इसकी एक अजीब कहानी है। मैं एक कारख़ाने में नौकर था। बड़ी ही ईमानदारी से मैंने नौकरी की लेकिन कारख़ाने का मालिक इतना शैतान था कि हमेशा ही एक न एक लगाये ही रहता था। एक दिन वह आया कि मैं उस कारख़ाने से निकाल दिया गया। मुझ ग़रीब का दिल देखने वाला कोई न रहा। मैं इधर-उधर मारा-मारा फिरता रहा। कहीं भी नौकरी न मिली। बाद में मैं डाकू बना। इन्सान होकर भी शैतान का पेशा अख़्त्यार किया और अब सरदार कहलाता हूँ साथ ही साथ मालदार भी हो गया हूँ।"

डाकुओं में से एक ने कहा—"मेरा भी यही दास्तान है। दिन-रात काम करता था। तनख़ाह बढ़ाने का नाम भी न लेता था। न एतवार की छुट्टी और न कोई छुट्टी; उसके अलावा डाट-फटकार सुनने का आदी भी हो चुका था। अचानक ख़बर आई कि मेरी बीबी की तबियत ख़राब है। दो दिन की छुट्टी ली।

उसकी तनख़ाह कटाई। दो दिन की जगह चार दिन लग गये। वापस आया तो मुझे उस शैतान मालिक ने जवाब दे दिया। आख़िर मुझे डाकू बनना पड़ा।"

दूसरे डाकू ने कहा—"मैं तो यही समझता हूँ कि देश में जितने भी चोर, डाकू, बदमाश, गुण्डे हैं इन सब को तैयार करनेवाले मालदार पूँजीपति ही हैं। ग़रीबों का ख़ून चूस चूसकर इनकी आदतें बिगड़ गई हैं। लोग तो रुपये का मुँह देख देख कर बातें करते ही हैं। मैं अपनी क्या सुनाऊँ? मेरे मालिक दो भाई थे। जो बड़े थे वे हम ग़रीबों का हमेशा ख़्याल किया करते थे और कभी ऐसी कोई बात नहीं कही जो कि किसी की शान के ख़िलाफ़ हो। जो छोटे थे। थे तो वे भले लेकिन बड़े मतलबी। बातों में तो वे ग़रीबों के लिए इतनी हमदर्दी ज़ाहिर करते कि कोई क्या करेगा लेकिन एक छदाम भी काम करके नहीं दिखाते थे। साथ ही साथ उनकी जीभ में लगाम न थी जो चाहते अनाप-सनाप कह डालते थे। बस इसी कहा सुनी में निरपराध मैं भी निकाला गया। शहर में उनका बड़ा दबदबा था इसलिए फिर किसी दूसरे ने मुझे अपने यहाँ रखने का साहस न किया। क्या करता? आख़िर डाकू बना।"

मिस्टर चटर्जी ने कहा—"शुरुआत तो अच्छी है। अब आप इस नाटक की कहानी सुनाएँ। देखें, कहाँ तक आपने कामयाबी हासिल कर ली है।"

मनोहर—"प्रतिभा किसी एक देशी राजा की लड़की है।

वह बड़ी बहादुर लड़की है। माँ बचपन में ही मर चुकी है। हर समय वह अपने बाप के साथ रहा करती है। एक बार जब राजा जंगल में शिकार खेलने गये तब वह भी उनके साथ गई। जंगल में डाकुओं ने उन्हें घेर लिया।"

मिस्टर चटर्जी—"बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! फिर क्या हुआ?"

मनोहर—"उसका पिता लड़ा तो बहुत लेकिन आख़िर में वह मारा गया। डाकू सरदार ने प्रतिभा को देखा। उसे उसने क़ैद कर लिया। डाकुओं के गिरोह में एक नाचनेवाली थी। उसने प्रतिभा को नाचना और गाना सिखाया। डाकू जब शाम को थक कर आते तब प्रतिभा अपने नाच और गाने से उन सभों को ख़ुश करती थी। उसी गिरोह में एक राजपूत नौ जवान था। वह प्रतिभा को चाहने लगा था और प्रतिभा भी उसे अपना समझने लगी थी।"

मिस्टर चटर्जी—"आपने ख़ूब लिखा। नाटक रोचक है। फिर क्या हुआ?"

मनोहर—"डाकुओं के सरदार को जब यह मालूम हुआ तब उसने उन दोनों को मार डालना चाहा क्यों कि वह जानता था कि जब दिल में मुहब्बत का घर बन जाता है तब शैतान भी देवता बन जाता है और देवता बनने पर फिर डाकूपन नहीं चलेगा। डाकूपन क़ायम रखने के लिए ही उसने यह तय किया

था। इधर डाकू सरदार का इरादा जानकर वे दोनों गिरोह छोड़कर भाग जाते हैं।"

मिस्टर चटर्जी—"मुझे तो बड़ी ख़ुशी हासिल हो रही है। आप इतने ग़ज़ब का नाटक तैयार करेंगे यह कौन जानता था? अच्छा फिर?"

मनोहर—"सरदार उन दोनों की खोज में निकल पड़ा लेकिन पता न लगा सका। इधर प्रतिभा के पिता की मौत होते ही बाग़ियों ने राज्य में बग़ावत कर दी। रिआया बहुत परेशान थी। प्रतिभा को उन सब की दशा से बड़ा कष्ट हुआ। वह मर्दाना वेष में रिआया का साथ देने लगी। वह राजपूत नौजवान भी हमेशा उसी के साथ रहता था। बहुत दिनों के बाद राज्य में अमन-चैन क़ायम हुई। लोगों को प्रतिभा का परिचय मालूम हुआ। वह गद्दी पर बैठाई गई।"

मिस्टर चटर्जी—"फिर क्या हुआ?"

मनोहर—"बाद में उसी नौजवान के साथ प्रतिभा की शादी होती है। अभी शादी की तैयारी ही हो रही थी कि राज्य पर डाकुओं ने चढ़ाई कर दी। घमासान लड़ाई हुई। लड़ाई में डाकू सरदार पकड़ा गया। उसे फाँसी की सज़ा दी गई मगर प्रतिभा ने फाँसी की सज़ा रद करके उसे माफ़ कर दिया। डाकू सरदार ने उसे देवी मानकर प्रणाम किया और वहाँ से चला गया।"

मिस्टर चटर्जी—"कथानक बहुत अच्छा है। फिर क्या हुआ?"

मनोहर—"राज्य भर में प्रतिभा की तारीफ़ होती है। बाद में नौजवान राजपूत के साथ उसका विवाह होता है। वह नौजवान राजा बनाया जाता है और प्रतिभा उसकी रानी बनती है। उस मौक़े पर रिआया बहुत ख़ुश होती है। सभी ख़ुश होकर प्रतिभा की तारीफ़ के गीत गाते हैं। राज्य भर में आनंद ही आनंद छा जाता है।"

मिस्टर चटर्जी—"ज़रा एकाध गाने तो सुनाइए :—

मनोहर—

"कहने से भला क्या होगा ?

इन्सान बना इन्सान का दुश्मन,
मुल्क में हो सकता न अमन;
जब दिल में नहीं मिलने की हवस
कहने से भला क्या होगा ?

कहता न ख़ुदा लड़ने को कभी,
लड़ने से हुए बरबाद सभी;
तालीम जहाँ मिलने की नहीं,
सब ओर मुसीबत ही है वहीं;
मज़हब को लड़ें मज़हब को मिटा
कहने से भला क्या होगा ?

मिस्टर चटर्जी—"अब तो मैं आप के क़लम को मान गया। नाटक तो मैंने बहुत देखे और बहुत खेले लेकिन ऐसा अच्छा

नाटक मैंने कभी नहीं देखा। अच्छा यह तो बताएँ कि आपने इतना कमाल कैसे हासिल किया ?"

मनोहर—"प्रतिभा की बदौलत।"

मिस्टर चटर्जी—"अच्छा एक और गाना सुना दीजिए।"

मनोहर—"अच्छी बात है।

हमारे लीडर वहीं हैं सच्चे,
जिन्हें लगन है वतन की अपने;
न धन का लालच सताये जिनको,
जिन्हें हैं दिखते वतन के सपने।
खुदा परस्ती अगर हैं करते,
न बुत-परस्ती से चिढ़ है उनको,
अगर हैं ईश्वर का नाम जपते,
खुदा से चिढ़ है कभी न जिनको।
ख़ुदा औ ईश्वर जुदा नहीं है,
यही समाया है दिल में जिनके;
मदद उन्हीं की करेंगे हम सब
रहेंगे होकर हमेशा उनके।

मिस्टर चटर्जी—"वक़्त के लिहाज़ से गाना अच्छा है।"

मनोहर—"प्रतिभा को नाचनेवाली गाना सिखाती है।

मत छेड़ो मुझे बनवारी।
छोड़ो बाँह हमारी॥

जहाँ तीरे नज़र चलते वहाँ क़ातिल करेगा क्या ?
मरा है जो मुहब्बत में भला वह फिर मरेगा क्या ?

मत छेड़ो मुझे बनवारी ।
छोड़ो बाँह हमारी ॥

दिल खोल कर जब रख दिया ग़ैरों ने की तब वाह ! वाह !
लेकिन उन्हों ने फेर ली फ़ौरन इनायत की निगाह ।

मत छेड़ो मुझे बनवारी ।
छोड़ो बाँह हमारी ॥

मिस्टर चटर्जी—"आप की प्रतिभा धन्य है ।"

मनोहर—"यह प्रतिभा आपकी ही है । मैं तो बस देख भर लेता हूँ ।"

मनोहर की इन बातों को सुनकर मिस्टर चटर्जी बहुत .खुश हुए और बोले—"प्रतिभा न मेरी है और न आप की । वह तो ईश्वर की एक देन है । जिस पर .खुश हो उसी को अपनी तक़दीर की सराहना करनी चाहिए । अब आप इसे जल्द पूरा करें । देखें प्रतिभा क्या कहती है ? .खुश तो ज़रूर होगी ।"

मनोहर—"यह तो उसकी मर्ज़ी की बात है ।"

दसवाँ परिच्छेद

लखनऊ में निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम खुल गया और गोपाल उसका सेक्रेटरी बनाया गया। काम बड़ी धूम के साथ होने लगा। अनाथ-महिलाएँ काफ़ी तादाद में आने लगीं। मदन और सुन्दर गोपाल पर नज़र तो रखते पर जब उस पर उन्हें विश्वास हो गया तब वे दोनों ढील देने लगे। गोपाल यही चहता भी था। उसके दिन बड़ी मौज के साथ कटने लगे। एक दिन सुन्दर ने उसका इम्तहान लेना चाहा लेकिन उपाय समझ में न आया। कुछ भी हो एक दिन रात के दस बजे के क़रीब वह ज़नानी पोशाक में आश्रम में गया। वहाँ पर जाकर देखता है कि गोपाल ने अपने ख़ास कमरे में एक युवती को बंद कर रखा है। उसके इस काम से सुन्दर को यह मालूम हो गया कि दाल में कुछ काला ज़रूर है। इसलिए वह एक पेड़ के पास की झाड़ी में छिपकर बैठ गया और ऐसी जगह छिपा जहाँ से सब बातें सुनाई पड़ें। जब रात और बीती यानी लगभग आधी रात के समय गोपाल ने अपने कमरे का ताला खोला और उस औरत के पास जाकर कहा, "बोलो, तुमने क्या तय किया है? बिना तुम्हारा इरादा जाने मैं तुम्हें छोड़ूँगा नहीं।"

उस औरत ने रोते हुए कहा—"मैंने लोगों के मुँह से मदन बाबू की पाक-दिली के बारे में काफ़ी तारीफ़ सुनी थी। मैं यह न

जानती थी कि मदन बाबू का आश्रम होने पर भी वे इसके इन्तज़ाम में दख़ल नहीं देते हैं। अगर यह मालूम होता तो मैं फिर कभी इस आश्रम में न आती।"

गोपाल ने मज़ाक़ करते हुए कहा—"तुम यह सोचकर आई थी कि मदन बाबू जैसे मालदार आदमी का प्रेम हासिल करोगी लेकिन अफ़सोस, मुझ ग़रीब से पाला पड़ गया। क्या करोगी? तक़दीर में जो बदा है वही मिलता है।"

गोपाल के पैरों पर गिर कर उस औरत ने बड़े ही विनीत भाव से कहा—"आप मेरे धर्म के भाई हैं। मदन बाबू को मैं देवता मानती हूँ। वे कोई मामूली आदमी नहीं हैं। उनके बारे में आप कोई नापाक बात न कहें। मैं उनका प्रेम पाने के लिए इस आश्रम में नहीं आई थी। दुनिया ने मुझे ठुकरा दिया, जिधर जाती उधर ही गुमराह करने वालों का गिरोह मिलता; इस लिए मैं इस आश्रम में आई। अगर कोई ख़ता की हो तो जाने दीजिए लेकिन मेरा अपमान न करें।"

गोपाल कुछ दूर पीछे हटकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया और बोला—"तुमने यह कैसे समझा कि मैं तुम्हारा अपमान कर रहा हूँ। ठीक है, औरतें अकसर उलटा ही समझा करती हैं। कुछ भी हो मैं सीधी भाषा में कह देना चाहता हूँ कि मैं न तो अपमान करना चाहता हूँ और न गुमराह करने की मंशा है। हाँ, इतना ज़रूर चाहता हूँ कि प्रेम के मन्दिर में बैठाकर अभिमान के साथ तुमहारा मान करूँ। हुक्म नहीं बल्कि दरख़ास्त है कि मेरे

दिल की तमन्ना पूरी की जावे; इसके लिए यह गोपाल गुलामी भी मंज़ूर कर लेगा।"

उस औरत ने गोपाल को समझाते हुए कहा—"जिसे कभी प्रेम के मन्दिर में बैठने का मौक़ा न मिला हो उसकी बात जुदा है, लेकिन जो एक बार प्रेम के मन्दिर में बैठ चुकी है और अपने सच्चे पाक दिल पुजारी को खो चुकी है वह अब राह चलते प्रेम के धर्मशाले में ठहरना ठीक नहीं समझती। आप का प्रेम-मन्दिर प्रेम का धर्मशाला छोड़ कर और कुछ नहीं है। किसी भी मुसाफ़िर को आप बिना हिचक के उसमें ठहरा सकते हैं। मन्दिर का रूप कुछ दूसरा ही होता है।"

गोपाल—"फिर भी तुम्हें इस प्रेम के धर्मशाले में ठहरना ही पड़ेगा।"

"अगर न ठहरूँ तो?"

"ज़बर्दस्ती की जावेगी।"

"इतना साहस।"

"आख़िर दूसरा तरीक़ा ही क्या है।"

उस औरत ने बड़ी हिम्मत के साथ कहा—"मैं तैयार नहीं हूँ।"

गोपाल ने पिस्तौल दिखाकर कहा—"तो फिर मौत का सामना करो।"

"मौत क्या है इसे तो मैंने समझा ही नहीं।"

"इसका न समझना ही अच्छा है।"

"अच्छा आप मुझे मौत का रास्ता बता दें।"

"क्यों बेकार मरना चाहती हो। एक बार कह दो कि मैं तैयार हूँ।"

"हर्गिज़ नहीं। शैतान भी क्या किसी से प्रेम कर सकता है? पाजी, नालायक़, औरतों का सत्यानाश करने वाला पापी चाण्डाल!" कहती हुई वह औरत आफ़त की तरह गोपाल पर टूट पड़ी और उसका पिस्तौल छीन लिया। साथ ही साथ जितना पीट सकती थी पीटा और बाद में जो रस्सी टँगी थी उससे उसे अच्छी तरह कस कर बाँध दिया और खिड़की की छड़ें निकाल कर वह कमरे के बाहर कूद पड़ी। बाहर आते ही ज़नानी पोशाक वाले सुन्दर से भेट हो गई। सुन्दर ने उससे पूछा—"आप खिड़की से क्यों कूदीं?"

औरत—"बहिन! इसकी बड़ी करुण कहानी है।"

सुन्दर—"कुछ तो बताएँ।"

उस औरत ने कुल क़िस्सा कह सुनाया। उस औरत की बातों को सुनकर सुन्दर ने कहा—"बहिन! घबड़ाओ नहीं। चलो मदन बाबू के घर चलें। उनसे भी सब दास्तान कहा जाय। देखना है कि वे क्या करते हैं?"

"मैं उनके घर नहीं जाऊँगी। कहाँ वे और कहाँ मैं? महलों में रहने वाले मुझ ग़रीबों पर क्यों तरस खाने लगे? उन को परमात्मा ने अमीर बनाया है, मालदार बनाया है, मुझ ग़रीबों

पर रहम करने के लिए थोड़े ही बनाया है ? साथ ही साथ यह भी मुमकिन नहीं कि वे सेक्रेटरी के ख़िलाफ़ जावें।"

सुन्दर ने समझाते हुए कहा—"बहन जी ! आप ग़लत समझ रही हैं। मदन बाबू को आप जानती नहीं हैं। बड़े ही नेक आदमी हैं। जब उनकी बीबी की मौत हुई और वे ग़म में पड़े रहने लगे तब एक फ़क़ीर के गाने से वे होश में आये और यह तय कर लिया कि दुनिया में सुखी होने का आसान तरीक़ा है कि ग़रीबों की सेवा की जावे क्यों कि उन सबों का दिल पाक रहता है और पाक दिल में ईश्वर रहता है। यानी ईश्वर से मिलने के लिए जरूरी है कि ग़रीबों की सेवा की जावे। बस इसी इरादे से यह निर्मला अनाथ-महिला आश्रम खोला गया।"

उस औरत ने साहस करते हुए कहा—"अगर ऐसा ही है तो फिर वे इस अश्रम की देख-भाल ख़ुद क्यों नहीं करते ? क्यों एक नापाक आदमी के मत्थे छोड़ रखा है ?"

सुन्दर—"जो ईश्वर से मिलने के रास्ते पर चलता है उसे पहिले शैतान ही मिलता है। और वह ऐसा शैतान जिसे कि समझना भी आसान नहीं है। ऐसा मीठा, इनता हमदर्द, ज़ुबान में अमृत और दिल में ज़हर। बहन जी, जिनपर भगवान की कृपा होती है वही इस शैतान से छुटकारा पाते हैं। भला सीधे सादे मदन बाबू क्यों कर समझ पाते कि आश्रम का सेक्रेटरी उनका दोस्त नहीं है बल्कि दुश्मन है। जब आप उनके पास

जावेंगी और अपना दास्तान बयान करेंगी तब वे भी उसे समझ सकेंगे।"

"मानती हूँ कि मदन बाबू ग़रीबों के हमदर्द हैं लेकिन जहाँ पर आश्रम के सेक्रेटरी जैसे शैतान डटे हों वहाँ भला ग़रीबों की सुनवाई कैसे हो सकेगी? बहन, ये शैतान बात करने में बड़े ही पक्के होते हैं। क्या मजाल इनसे कोई पेश पा जाय। अपनी बचत के लिए ये तरह तरह के उपाय पहिले से ही सोचे रहते हैं।"

"सोचने दीजिए। शैतान कभी कामयाब नहीं हो सकता। जो सच है वह सच होकर ही रहेगा। उसे कोई दबाये ऐसी ताक़त किसी में नहीं है। मेरा कहना मानकर आप मदन बाबू के पास चलें। फिर जो कुछ होगा वह देखा जायगा।"

बहुत कुछ कहने सुनने पर वह मदन बाबू के मकान पर गई। रात के दो बजने का समय था। बरामदे में उस औरत को खड़ा करके सुन्दर मकान के अन्दर चला गया और अपने कपड़े बदल कर मदन के कमरे में गया। उस समय मदन अचेत पड़े सो रहे थे। सुन्दर ने कमरे में जाकर धीमी बत्ती को तेज़ कर दिया और एक कुर्सी पर बैठ गया। अचानक कमरे में उजाला हो जाने से मदन जाग पड़ा और सुन्दर को बैठा हुआ देखकर बोला—"सुन्दर! इतनी रात में तुम कैसे अकेले बैठे हो?"

"ग़रीबों के दिल का एक नमूना लाया हूँ। अच्छा हो कि आप उसे अभी देख लें।"

"वह कहाँ है ? मैं उसे ज़रूर देखूँगा ? सुन्दर जल्दी करो।"

"बाहर बरामदे में है। अन्दर आने को वह तैयार नहीं है।"

"अच्छी बात है मैं वहीं जाकर उसे देखता हूँ।" इतना कहकर मदन जिस हालत में था उसी हालत में कमरे के बाहर बरामदे में जा पहुँचा। सुन्दर भी उसके पीछे पीछे चल पड़ा। बरामदे में एक औरत को खड़ी देखकर मदन चक्कर में पड़ गया। उसकी समझ में न आया कि यह औरत यहाँ क्यों खड़ी है। मदन ने सुन्दर को बुलाकर कहा—"यहाँ यह औरत कैसे आई ? तुम्हारा वह ग़रीबों का दिल कहाँ है ? मैं उसे ज़रूर देखूँगा।"

सुन्दर कुछ जवाब दे इसके पहिले ही वह औरत मदन के पैरों पर गिर पड़ी और ख़ूब रोई। रोते रोते जब थक गई तब उसने सिसकते हुए कहा—"एक अनाथ औरत पर आप इतनी ही कृपा करें जिससे कि उसके धर्म और मान में बट्टा न लगने पाये। आप की मैंने बड़ी तारीफ़ सुनी और ख़ास कर यह मालूम कर लिया कि आप पाक दिल आदमी हैं इसलिए यहाँ तक चली आई हूँ। अब मैं जाना चाहती हूँ।"

"आख़िर आप यहाँ तक क्यों आईं ?"

"यों ही राह पूछती हुई चली आई। अब आप मुझे क्षमा करें।"

"देखिए, आप अपने दिल की सब बातें कह दीजिए। डरिए नहीं।"

"मुझे आपसे कुछ भी कहना नहीं है। आप जैसे पाक दिल आदमी को अपना नापाक दास्तान सुनाऊँ यह ठीक नहीं है। आप देश के क़ीमती रत्न हैं। मैं आप से मिलकर आप की क़ीमत घटाऊँ यह भला कैसे हो सकता है?"

सुन्दर ने अपना असली परिचय देते हुए उस औरत से कहा—"कुछ समय आप ने जिस औरत का साथ किया था वह मैं ही हूँ। आपको मैं बहन के समान मानता हूँ। आप घबड़ाएँ नहीं।" इतना कहकर सुन्दर ने मदन को कुल कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। सुनते ही सुन्दर और उस औरत को साथ लेकर मदन आश्रम की ओर चल पड़ा।

आश्रम के पास पहुँच कर मदन ने उस औरत और सुन्दर को बाहर ही खड़ा कर दिया और अकेला गोपाल के कमरे में जा पहुँचा। वहाँ पर जाकर देखता है कि गोपाल बँधा हुआ पड़ा है। उसकी यह दशा देखकर मदन ने न तो ग़ुस्सा किया और न हँसा ही। साधारण ढंग से उसने गोपाल से पूछा—"तुम इस तरह कैसे बँध गये? मैंने अगर तुम्हें बाँधा था तो स्नेह की रस्सी से न कि सन की डोरी से? गोपाल! प्रेम का बन्धन क्या ऐसा ही होता है?"

गोपाल ने कहा—"पहिले मुझे खोल दो फिर मज़ाक़ करना। ऐसे आश्रम की सेवा से तो मैं बिना आश्रम के ही मज़े में था। तुम सब लखनऊ वाले बड़े ही ख़तरनाक आदमी हो। मुझे ऐसा नहीं मालूम था कि आख़िर मेरी यह हालत होगी।"

ग्यारहवाँ परिच्छेद

नाटक जब लिख कर तैयार हो गया तब मिस्टर चटर्जी के पास जाकर मनोहर ने कहा—"अच्छा होता कि अब इसका ज़िक्र प्रतिभा से भी किया जाता।"

मिस्टर चटर्जी ने ख़ुश होकर जवाब दिया—"मैं भी यही कहने की सोच रहा था।"

इतने में प्रतिभा भी वहाँ आ गई। पास जो कुर्सी पड़ी हुई थी उस पर उसे बिठाकर मिस्टर चटर्जी ने मनोहर की तारीफ़ करते हुए कहा—"इन्होंने तो ग़ज़ब का काम कर डाला है।"

प्रतिभा ने कहा—"क्या बिल्ली के पेट से शेर को निकाला है या और कुछ?"

मिस्टर चटर्जी—"तुम्हारे नाम पर एक नाटक लिख मारा है।"

प्रतिभा—"तो फिर इसमें तारीफ़ की कौन-सी बात हुई?"

मिस्टर चटर्जी—"वाह! आला दर्जे का दिमाग़ ख़र्च कर दिया। यह क्या कोई मामूली बात है? अभी तक तो किसी ने ऐसा करके न दिखाया। सचमुच यह तारीफ़ का काम है।"

प्रतिभा—"जैसे साँपनाथ वैसे नागनाथ। आप मनोहर की सराहना कीजिए और मनोहर आप की सराहना करें। गुरू और घंटाल का जोड़ पूरा हो ही गया है। अब क्या है?"

मिस्टर चटर्जी—"मनोहर बाबू ने अपने नाटक का नाम प्रतिभा रखा है।"

प्रतिभा—"यह तो अपनी अपनी रुचि है।"

मिस्टर चटर्जी—"मुझे तो यह नाटक बहुत पसन्द आया है। इन्होंने तो तुम्हारे नाम को अमर कर दिया है। दुनिया में प्रतिभा ही प्रतिभा दिखाई पड़ेगी।"

प्रतिभा ने मनोहर से कहा—"सच कहा जाय तो आप बड़े प्रेमी हैं।"

मनोहर का दिल नाच उठा। उसने कहा—"यह आपको कैसे मालूम हुआ?"

प्रतिभा—"अगर आप बड़े प्रेमी न होते तो बेकार मेरे नाम को अमर बनाने के लिए इतनी मेहनत से नाटक की रचना क्यों करते? मैं आपका निहोरा मानती हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि आप की अक़्ल हमेशा दुरुस्त रहे।"

मिस्टर चटर्जी ने हँसते हुए कहा—"इनपर बड़ी मेहरबानी की?"

प्रतिभा—"इनके दिल में अभी कुछ छिपा हुआ है। ख़ैर, कभी निकलेगा ही।"

मनोहर—"आप बड़ी होनहार हैं। नाटक की दुनिया में आप की बड़ी ज़रूरत है।"

प्रतिभा—"नाटक की दुनिया में जिसे देखो वही मेरे नाम को अमर बनाने के लिए दिन-रात मेहनत किया करता है। न जाने लोग मुझ में क्या देख रहे हैं? मैंने तो जहाँ तक अपने को देखा बहुत ही मामूली दर्जे में पाया। फिर आप लोगों का

इतना प्रेम क्यों ढुलकता हुआ मेरी ओर चला आ रहा है? क्या कहीं बहा ले जाने का इरादा है? इतना प्रेम! मानों प्रेम का समुद्र उफान मार रहा हो! ओह!"

मनोहर—"अगर गुलाब को अपनी ख़ूबसूरती का पता लग जावे तो ········"

मनोहर अभी अपनी बात भी पूरी नहीं कर पाया था कि प्रतिभा ने चट से जवाब दिया—"तो वह कँटीली झाड़ी में अपना खिलना कभी पसंद न करता।"

मनोहर—"अच्छा अगर कमल को अपनी रूप-माधुरी का कुछ भी ज्ञान होता तो?"

प्रतिभा—"तो वह कीचड़ में कभी भी पैदा न होता।"

मनोहर ने प्रतिभा से हँसते हुए कहा—"अगर प्रतिभा को अपनी महिमा का पता लग जाता तो क्या होता?"

"होता क्या? वह तुरंत आप लोगों का साथ छोड़ देती और अपनी एक नई दुनिया बसा लेती।" प्रतिभा एक साँस में इतना कह गई।

मिस्टर चटर्जी ने घबड़ाते हुए कहा—"प्रतिभा, कहती क्या हो?"

प्रतिभा—"सच कहती हूँ। अगर मुझमें अपनी महिमा का तनिक भी ज्ञान होता तो मैं इस नाटक कम्पनी में पल भर भी न रहती।"

मिस्टर चटर्जी—"आख़िर तुम्हें तकलीफ़ किस बात की है?"

प्रतिभा—"तकलीफ़ सोलहो आने है। तबियत ठीक हो या न हो लेकिन नाटक में पार्ट करना ज़रूरी है। जी तो भीतर ही भीतर जल भुनकर ख़ाक होता जा रहा है लेकिन रंगमंच पर आते ही ख़ुशदिली का सोंग रचना पड़ता है। संसार की निगाह में धूल झोंक कर आप जैसे धूर्तों के साथ ज़िन्दगी बिताना मुझे बिलकुल मंज़ूर न होने पर भी लाचार हो कर साथ रहना पड़ रहा है।"

मिस्टर चटर्जी ने साधारण ढंग से कहा—"मैंने कौन सी ग़लती की है जिससे कि आज पारा एकदम ऊपर चढ़ा जा रहा है।"

प्रतिभा—"आपने वह ग़लती की है जिसका कि कभी सुधार नहीं हो सकता। मिस्टर चटर्जी, यह आपका ही माया जाल था जिसकी वजह से सभ्य समाज की प्रतिभा को दर दर ठोकरें खानी पड़ रही हैं। आप मेरे संगीत के शिक्षक होते हुए भी मेरे सर्वनाश के असली जड़ हुए। कौन जानता था कि आपके संगीत से वह नाशकारी ध्वनि निकलेगी जिससे कि नारी समाज की प्रतिभा का जीवन, नरक की धधकती हुई भयानक आग में हमेशा के लिए जलता रहेगा। मुझे आपका साथ बिलकुल पसंद नहीं है। मैं नाटक कम्पनी से अलग होना चाहती हूँ। आप मेरा इस्तीफ़ा मंज़ूर कीजिए। मैं आज ही यहाँ से चली जाऊँगी।"

"कहाँ जाने का इरादा है?" मिस्टर चटर्जी ने पूछा।

"जिधर जी चाहेगा उधर जाऊँगी।" प्रतिभा ने जवाब दिया।"

"जाने वाले को भला कौन रोक सकता है?" मनोहर ने ऐसे ढंग से कहा मानों वह मज़ाक़ उड़ा रहा हो।

मिस्टर चटर्जी ने मनोहर से कहा—"आप कभी कभी बिना समझे बात कर बैठते हैं यह आपकी बड़ी बुरी आदत है।"

"अच्छी बात है। आदत को कल से सुधार कार्यालय भेजता हूँ। आप को फिर शिकायत करने का कभी मौक़ा न मिलेगा।"

झुँझलाते हुए मिस्टर चटर्जी ने कहा—"मज़ाक़ करने का भी एक ढंग होता है।"

मनोहर—"अच्छा होता कि आप मज़ाक़ सिखाने का एक स्कूल खोल देते। नये ढंग का स्कूल होने से मुमकिन था कि सरकार भी पीठ ठोंक देती।"

मिस्टर चटर्जी—"फिर भी आप अपनी हरकत से बाज़ नहीं आ रहे हैं।"

मनोहर—"नाटक कम्पनी वालों का काम है दिल बहलाना। मैं भी दिल बहलाने का काम कर रहा हूँ। मालूम नहीं, आज आपका दिल क्यों नहीं बहलता ?"

मिस्टर चटर्जी—"जब प्रतिभा ही साथ छोड़ रही है तब फिर दिल कहाँ ?"

प्रतिभा जो कि अभी तक चुपचाप खड़ी थी बोली—"जिस प्रतिभा की आड़ में आपने अपने जीवन को छिपाना चाहा वह प्रतिभा अब मैं नहीं हूँ। मेरा दिल अब एक ऐसी नई दुनिया की खोज करेगा जिसमें दिल हो लेकिन अरमान न हो, भगवान हो लेकिन भोग न हो, ख़ुदा की हस्ती हो लेकिन ख़ुदग़र्ज़ी की बू न हो। शराफ़त हो लेकिन उसमें शैतान का जादू न हो। अब मैं

जीवन का वह नाटक खेलूँगी जिसके अभिनय में मैं अपने आप को भूल जाऊँगी।"

इतना कहकर प्रतिभा वहाँ से चली गई और अपने साथ की दूसरी एक्ट्रेसों को भी अपना इरादा कह सुनाया। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि प्रतिभा ने इस्तीफ़ा दे दिया है तब वे भी इस्तीफ़ा देने के लिए तैयार हो गईं। मिस्टर चटर्जी की समझ में यह न आया कि किस तरह प्रतिभा को रोका जाय। वे उदास होकर बैठ गये।

मनोहर भी वहाँ से उठ पड़ा और प्रतिभा के पास जाकर खड़ा हो गया। प्रतिभा ने कहा :—

"फँसे हो तो फँसे रहना किसी को अब फँसाना मत ;
रुलाना जब तुम्हें भाता किसी को अब हँसाना मत।"

मनोहर ने पूछा—"क्या आप सचमुच जा रही हैं या मज़ाक़ कर रही हैं ?"

प्रतिभा—"मज़ाक़ करने से फ़ायदा ?"

मनोहर—"फिर भी मैंने सोचा शायद········"

प्रतिभा—"आप सब नारी समाज के दुश्मन हैं। अब मैं आप लोगों के जाल से छुटकारा पाना चाहती हूँ। देखना है कि दुनिया में चैन कब नसीब होती है ?"

मनोहर—"क्या मेरा भी साथ आपको पसंद नहीं है ?"

प्रतिभा—"बिलकुल नहीं। आप मेहरबानी करके यहाँ से चले जायँ।"

बारहवाँ परिच्छेद

प्रतिभा की बातों को सुनकर मनोहर मिस्टर चटर्जी के पास दौड़ा गया और वहाँ जाकर बोला—"प्रतिभा जा रही है।"

"अब आप अपने नाटक को शहद लगाकर चाटिए।" कहते हुए मिस्टर चटर्जी उठकर खड़े हो गये। उनके पास जाकर मनोहर ने कहा—"आप क्या अपनी प्रतिभा को रोकने की कोशिश तक भी नहीं कर सकते ?"

"यह किसी के मान की नहीं है।"

"एक बार कोशिश करके तो देखिए।"

"मैं उसकी आदत अच्छी तरह जानता हूँ। अब वह नहीं रुकेगी।"

"कुछ भी हो। एक बार आप ज़रूर उससे मिल कर बातें कर लें। मुमकिन है, समझ जाय और अपना इरादा बदल दे।"

"अच्छी बात है। मैं एक बार उससे मिलने की कोशिश करता हूँ।" इतना कहकर मिस्टर चटर्जी प्रतिभा से मिलने के लिए चल पड़े।

इधर नाटक कम्पनी की दूसरी एक्ट्रेसों को अपने पास बुला कर प्रतिभा ने कहा—"आज से मैं अपने जीवन का रास्ता बदलने जा रही हूँ। आप लोग मेरा साथ देंगी या इसी तरह नापाक दुनिया के सामने अपनी ज़िन्दगी को बर्बाद करती

रहेंगी ? देवियो ! अगर आपमें कुछ भी अपनी शान का अभिमान है, अगर आप यह चाहती हैं कि आपकी वजह से देश के नारी-समाज का नाम पाक बना रहे, अगर आप को भारत की पवित्र महिला होने का कुछ भी घमंड है; तो आप आज से अपने में वह हिम्मत लायें जिससे कि लालच की दुनिया का सुनहले तार का जाल टूट जाय और आप सब आज़ादी के साथ आज़ाद दुनिया की अमन चैन हासिल कर लें।"

प्रतिभा की जोशीली बातों को सुनकर एक्ट्रेसों में से एक ने कहा—"मुझे आपकी सभी बातें मंज़ूर हैं लेकिन जिसकी ज़िन्दगी शुरू से ही सुनहले तार के जाल में पड़ी हुई है वह भला कैसे आज़ाद हो सकेगी ? यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। भला ऐसा कौन होगा जो कि आज़ाद होना पसंद न करे लेकिन लाचारी पीछा छोड़ती ही नहीं।"

"जब दिल में यह ठान लिया गया कि अब आज़ाद होना है तब फिर रुकावट कहाँ ?"

"फिर भी अचानक किसी अनजान रास्ते पर चलना ठीक न होगा। अच्छा तो यह होगा कि अगर कोई जानकार इस आज़ादी के रास्ते पर चला दे तो बहुत ठीक होगा। साथ ही साथ राह बताने वाला इस लायक़ हो कि हम सब उस पर इतमीनान कर सकें। बहन प्रतिभा ! आप को तजुर्बा भी इस बात का है कि हम सब एक दिन आज़ाद होने के लिए ही अपने घर से, अपने समाज से, अपने प्रान्त से और अपने कुटुम्ब से

निकल पड़ी थीं लेकिन आज़ादी तो मिली ही नहीं ; उल्टा ही शैतान के पिंजड़े में फँस गई। नतीजा यह हुआ कि शरीफ़ ख़ानदान की औरतें तक भी हम लोगों से मिलने में हिचकने लगी हैं। इसी लिए मेरा यह कहना है।"

इतने में मिस्टर चटर्जी आ पहुँचे और बड़े ही विनीत भाव से बोले—"मेरी ज़िन्दगी का सवेरा जिस रोशनी की चमक से हुआ था आज उसी के चली जाने से ज़िन्दगी की शाम क़रीब मालूम हो रही है। मैंने जिसके लिए अरमानों की नीव पर उम्मीदों का महल बनाया आज जब वही मुझे छोड़ कर चलने के रास्ते पर है तब फिर भला अब ज़िन्दा रहने से फ़ायदा ही क्या है ?"

"ज़िन्दा रहने से क्या फ़ायदा है यह वही समझ सकता है जो कि ज़िन्दा दिल है। जिसका दिल गुनाहों के पहाड़ के नीचे दब कर मुर्दा बन गया है वह भला ज़िन्दगी की क़ीमत क्या बतायेगा ? आप अपने लिए जो ठीक समझें करें, मुझे आप की बातों से कोई मतलब नहीं है।"

मिस्टर चटर्जी कुछ कहना ही चाहते थे कि प्रतिभा ने उन्हें रोकते हुए कहा—"आप क्या कहना चाहते हैं वह मैं जानती हूँ। अब आप मुझ प्रतिभा की ओर न देखकर भगवान की प्रतिभा की ओर देखें। देखना न आता हो तो उसके देखने का अभ्यास करें। बस यही एक ऐसा रास्ता है जिससे कि पाप के अँधेरे में पुण्य का प्रकाश मिल जाता है। अब आपका यहाँ पर अधिक

रुकना ठीक नहीं है। मुझे अभी अपनी इन बहनों से कुछ जरूरी बातें करनी हैं।"

मिस्टर चटर्जी चुपचाप वहाँ से चले गये। उनके चले जाने पर प्रतिभा ने उस एक्ट्रेस से कहा—"आपका कहना ठीक है। लेकिन अब तजुर्बा काफ़ी हो चुका है। अब हमें पूरी आज़ादी मिल जायगी। बस हिम्मत भर करने की देरी है। अगर कोई ठीक रास्ता न मिले तो फिर अच्छा यही होगा कि आप सब अपने अपने घर चली जायँ लेकिन नाटक कम्पनी में अब न रहें।"

माधवी जो कि पहिले से बोल रही थी बोली—"अब घर में कहाँ जगह मिल सकती है?"

दूसरी एक्ट्रेस बिजली बाला ने कहा—"बहन माधवी का कहना बहुत ठीक है। जिस दिन घर से बाहर पैर रखा उसी दिन से घर का नाता छूट चुका। अब हम लोगों को कहीं भी जगह न मिलेगी।"

तीसरी एक्ट्रेस मालती ने कहा—"यों तो कोई बात न थी लेकिन जिस तरीक़े से हम सबों को अपना अपना घर छोड़ना पड़ा है वह तरीक़ा समाज की निगाह में अच्छा नहीं हो सकता। ऐसी दशा में घर वाले क्यों अपनाने लगे क्यों कि उन्हें भी तो समाज का डर है। और होना भी चाहिए।"

प्रतिभा ने गंभीरता के साथ पूछा—"तो क्या इस तरह की

ज़िन्दगी आप लोग पसंद करती हैं ? भूल किससे नहीं होती ? लेकिन भूल का सुधार भी होता रहता है। जो हो गया उसका ज़िक्र छोड़ कर अपने को सुधारना ही इस समय का काम है।"

माधवी ने कहा—"सुधार कैसे हो ? जब हमें अपने ही अंग तकलीफ़ देना चाहते हैं तब फिर आगे की उम्मीद ही क्या है ?"

बिजली बाला ने कहा—"अब यह वक़्त बहस का नहीं है। एक ऐसा ढंग सोच कर निकालना चाहिए जिससे कि कामयाबी हासिल हो और दुनिया में हँसी भी न हो।"

मालती ने कहा—"जब तक दुनिया की हँसी का डर रहेगा तब तक कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। शैतान क्यों अपने काम में कामयाब होता है ? वजह यह है कि न तो उसे दीन का डर है और न दुनिया की पर्वाह है। ख़ुदा और भगवान, दीन और दुनिया, सभी को वह लात मार कर दूर कर देता है तब वह आपही आप कामयाब हो जाता है। इसी तरह हमें भी कामयाबी हासिल करने के लिए कमर कस लेनी चाहिए।"

प्रतिमा ने कहा—"फिर भी शैतान का रास्ता हमारे लिए ठीक न होगा। ख़ैर, अब अच्छा यही होगा कि यहाँ से चल दिया जाय।"

सभी एक्ट्रेसों ने एक साथ कहा—"हम सब तैयार हैं।"

इसके थोड़ी ही देर बाद वे सब एक्ट्रेस प्रतिभा के पीछे पीछे चल पड़ीं। मिस्टर चटर्जी और मनोहर दोनों ताकते ही रहे।

जब प्रतिभा आँख से ओझल होगई तब मिस्टर चटर्जी की आँखों से आँसू बह चले। मनोहर ने उनको समझाते हुए कहा--"अजी आप रोते क्यों हैं? प्रतिभा जैसी सैकड़ों एक्ट्रेस मिल जायँगी। छिः! उड़ती हुई चिड़िया के लिए रोना शोभा नहीं देता।

इतने में नाटक कम्पनी के अन्य एक्टर आ पहुँचे और मिस्टर चटर्जी से बोले—"मेहरबानी करके आप हम लोगों का हिसाब चुकता कर दीजिए क्यों कि अब आप की यह नाटक कम्पनी चलने की नहीं है।"

मनोहर ने मिस्टर चटर्जी से कहा—"ये लोग कहते तो ठीक हैं। दे दीजिए हिसाब और मारिए गोली। क्या रखा है नाटक कम्पनी में? चलिए, चलकर कहीं कोई नया रोज़गार किया जाय।"

तेरहवाँ परिच्छेद

केतकी का इम्तहान हो गया। वह पास भी हो गई। उसे बधाई देने के लिए सुन्दर बनारस गया। दो चार दिन बीत जाने पर एक दिन सुन्दर ने केतकी से कहा—"चलो आज नाँव पर बैठकर बनारस की शोभा देखी जाय।"

केतकी ने हँसते हुए कहा—"अगर नाँव डूब गई तब?"

सुन्दर—"जहाँ तुम रहोगी वहीं मैं भी चला जाऊँगा।"

केतकी—"मैं कहाँ रहूँगी कौन जानता है? इसका हाल तो वही बता सकता है जो कि कहीं कभी अचानक डूब गया हो और बाद में फिर उसे नई ज़िन्दगी मिल गई हो। मैं क्या बताऊँ? तुम नाँव पर घूमना चाहते हो, चलो। मैं हर समय तैयार हूँ लेकिन यह याद रखना कि दरियाये दिल में कहीं तूफान न आ जाय और हम दोनों अपने आप को भूल जाँय।"

सुन्दर ने कहा—"यह तो मौसम पर निर्भर है। चलो, फिर देखा जायगा।"

इस तरह दोनों तैयार हो गये। दशाश्वमेध घाट पर एक नाँव तय की गई। उस पर दोनों सवार हो गये। नाव चल पड़ी। चलते चलते वे मणिकर्णिका घाट पार कर रहे थे कि अचानक गंगा जी की धारा में किसी के कूदने का शब्द सुनाई पड़ा।

सुन्दर का ध्यान उस ओर चला गया। एक क्षण का भी समय न बीत पाया था कि वह ताड़ गया कि किसी ने आत्महत्या करने के लिए गंगा की शरण ली है। वह तुरंत उसी जगह कूद पड़ा और उस डूबते हुए को पकड़ कर अपना नाँव पर ले आया। डूबने वाला मर्द न होकर एक औरत निकली। सुन्दर ने केतकी से कहा—"आज का घूमना यहीं से खतम हुआ। चलो घर चलें।"

मल्लाह ने नाव घुमा दी। क्षणभर में डूबने वाली औरत होश में आगई। केतकी ने बड़े ही मीठे शब्दों में उससे पूछा—"आप को क्यों अपने जीवन से प्रेम नहीं है?"

उस औरत ने बड़े ही दुःख भरे शब्दों में कहा—"जब कोई मेरे इस जीवन से प्रेम नहीं करता तब फिर भला मैं क्यों इससे प्रेम करूँ? जितनी जल्दी मौत आ जाय उतना ही अच्छा।"

केतकी—"आखिर मामला क्या है?"

"मामला कुछ नहीं है। हिन्दू घर की औरत होना ही गुनाह है।"

"यह तो मज़हब की बात है। लेकिन जीवन से इसका क्या संबंध है?"

"जब मज़हब नहीं तब ज़िन्दगी कहाँ? दुनिया अगर क़ायम है तो बस मज़हब पर ही। जिन्हें अपने मज़हब की पर्वाह नहीं है वे कभी दुनिया में क़ायम रह नहीं सकते। जो अपने मज़हब पर क़ायम रहता है वह कभी दूसरे मज़हब को नफ़रत की निगाह से नहीं देखता। जहाँ मज़हब है वहाँ ईमान है। जहाँ ईमान है वहाँ

इन्साफ़ है। जहाँ पर इन्साफ़ है वहाँ रहम है। जहाँ रहम है वहाँ मुहब्बत है। जहाँ पर मुहब्बत है वहाँ मेल है। जहाँ मेल है वहाँ ताक़त है। जहाँ ताक़त है वहाँ अपनी हुकूमत है और जहाँ पर हुकूमत है वहाँ आज़ादी है। जब आज़ादी हासिल हुई तब दुःख दूर हो जाते हैं और दुःख दूर होते ही भगवान मिल जाते हैं। इसलिए भगवान के पाने के लिए मज़हब का पक्का होना ज़रूरी है। इसी लिए जब मैंने देखा कि मैं अपने मज़हब में अब नहीं टिकने पाती तब आत्म हत्या करना चाहा लेकिन देखती हूँ कि वह भी मुझ से न हुई।"

सुन्दर जोकि चुपचाप सब बातों को सुन रहा था बोला—"क्या मैं आपकी कुछ भी सेवा कर सकता हूँ?"

"मैं आपसे किस तरह की सेवा लूँ यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है।"

केतकी ने उस औरत से उसका नाम जानना चाहा। उसने अपना नाम राधा बतलाया। नाम जान लेनेपर केतकी ने उससे पूछा—"क्या आप यह बताने की कृपा करेंगी कि आप क्यों मज़हब में नहीं टिकने पा रही हैं? कौन ऐसी घटना है जो कि आपको तकलीफ़ दे रही है?"

राधा ने कहा—"मैं एक ग़रीब घराने की लड़की थी। भाग्य से एक अमीर घराने में पड़ गई और वहीं मैं पढ़ी लिखी। पड़ोस में दो चार ऐसे लोगों के घर थे जहाँ कि मैं हमेशा आती जाती थी। एक दिन मैं सिनेमा देखने गई। जब लौट रही थी

अचानक कुछ गुंडों ने मुझे घेर लिया। उन गुंडों में मेरे पड़ोसी जिन्हें कि मैं पहिचानती थी वे भी थे। मालूम नहीं उन्होंने क्या समझ कर मुझे घेरा ? मैं चिल्लाने लगी। इतने में एक काँग्रेस का स्वयं सेवक आ पहुँचा। उसके आते ही वे सब भाग गये। बेचारा स्वयं सेवक मुझे अपने उस अमीर के घर पहुँचा आया जहाँ कि मैं रहती थी। सवेरा होते ही मुहल्ले में यह शोर हो गया कि राधा कल रात में जिसके साथ घर आई वह एक मुसलमान था। इसी अपराध में मैं उस अमीर के यहाँ से निकाली गई। अपने घर गई। वहाँ भी यही ज़िक्र रहा। कहीं जगह न मिली। बेचारा वह स्वयं सेवक फिर मेरे पास आया और बोला—"मैं काँग्रेस का स्वयं सेवक हूँ। आप घबड़ाएँ नहीं। चलिए आपको लखनऊ के निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम में पहुँचा आऊँ। वहाँ पर पहुँचते ही सब तकलीफ़ दूर हो जायगी।" मैं तैयार हो गई और उसके साथ चल पड़ी। शहर भर में ख़बर फैल गई कि राधा एक मुसलमान के साथ भागी जा रही है। अब क्या था ? वही सब गुंडे लाठी ले लेकर निकल पड़े। मुसलमान भला कब पीछे रह सकते थे ? वे भी अपने हममज़हब भाई को बचाने मैदान में आ गये। ग़नीमत यह हुई कि पुलिस आ गई इसलिए कोई झगड़ा न हुआ लेकिन शहर में सनसनी फैल गई। कहीं मेरे लिए बनारस में हिन्दू-मुसलमान दंगा न हो जाय इसीलिए मैंने आत्महत्या का उपाय सोचा था और इसके लिए कोशिश भी की लेकिन कामयाब न हो सकी।"

सुन्दर ने कहा—"मैं यह जानता हूँ कि ग़रीबों के दिल में जो पवित्रता है वह कभी अमीरों के दिल में नहीं मिल सकती है लेकिन रंज तो इस बात का है कि अमीर ही ग़रीबों को बदनाम करने के लिए हमेशा दस क़दम आगे बढ़ते रहते हैं। कुछ भी हो, आप मेरे साथ लखनऊ चलें। मदन बाबू के अनाथ-महिला-आश्रम में आपको स्थान मिल जायगा। मेरे साथ चलने में आपको किसी तरह के झंझटों का सामना नहीं करना पड़ेगा। जहाँ सत्य है वहाँ फिर भय कहाँ ?"

इतने में नाव अपने ठीक ठिकाने पर आ गई। केतकी राधा को साथ लेकर उतर पड़ी। सुन्दर पीछे पीछे उतरा। इसके बाद वे तीनों अपने घर पर आ गये। घर आते ही केतकी ने राधा को अपनी साड़ी पहनाई और अपने ही साथ भोजन कराया। भोजन करते समय राधा ने केतकी से कहा—"आप बड़ी ही दयालु हैं।"

"मैं दयालु नहीं हूँ। यह तो मेरा फ़र्ज़ है कि अपनी डूबती हुई बहनों को बचाकर उनकी सेवा करूँ और सच्चे दिल से अपनाऊँ ?"

सुन्दर ने कहा—"देवी जी ! जिसे आप दयालुता कहती हैं वह तो एक ऐसा काम है जिसे कि हर एक मनुष्य को करना चाहिए। आपको यह जान कर ख़ुशी होगी कि लखनऊ वाले अनाथ-महिला-आश्रम की होनेवाली संचालिका यही कुमारी केतकी देवी हैं।"

केतकी ने चकित होकर कहा—"और वह गोपाल ?"

"गोपाल का हाल मत पूछो। वह तो वैसा ही निकला जैसा कि तुम ने अनुमान किया था। अब भाई साहब उसे अच्छी तरह जान गये।"

राधा को समझने में तनिक भी देरी न लगी कि ये सब उसी ख़ानदान से संबंध रखते हैं जिस ख़ानदानवालों ने अनाथ महिला आश्रम खोला है। उसे बड़ी ख़ुशी हासिल हुई लेकिन वह चुपचाप बैठी ही रही।

केतकी ने राधा से कहा—"आज रात में हम सब लखनऊ के लिए रवाना होंगे। एक दुनिया को छोड़ कर दूसरी दुनिया में जाँयगे।"

सुन्दर ने हँसते हुए कहा—"एक दुनिया नहीं, एक शहर को छोड़ कर दूसरे शहर जायँगे।"

केतकी—"अच्छा, अलोचना होने लगी ?"

राधा ने साधारण ढंग से कहा—"आप दोनों ही सही कहते हैं। यह तो अपने अपने ख़्यालात हैं। कोई दुनिया कहता है तो कोई शहर। शहर कहने से भावों में रूखापन आ जाता है और दुनिया कहने से भावों में रस और आनंद दोनों ही समान रूप से आ जाते हैं।

चौदहवाँ परिच्छेद

गोपाल की काली करतूत से मदन को बड़ा दुःख हुआ लेकिन गोपाल से किस तरह बातें की जावें यह उसकी समझ में न आया। गोपाल भी उससे मिलने के लिए कई बार आया लेकिन मदन ने जान बूझ कर उससे मिलने को इंकार कर दिया और ऐसा बहाना बताया जिससे कि गोपाल के दिल में चोट न पहुँचे। इसका असली सबब यह था कि मदन यह नहीं चाहता था कि बेकार किसी को अपना दुश्मन बनाया जाय। भलमन-साहत के माने यही हैं कि जहाँ तक हो लड़ाई झगड़े से दूर रहे क्यों कि, लड़ने वाले कभी भी अपनी भलमनसाहत क़ायम नहीं रख सकते। साथ ही साथ जो शैतान है उसका सुधार आसानी से नहीं हो सकता ; लेकिन भगवान का इंसाफ़ ऐसा होता है कि शैतान को अपने किये का फल मिल ही जाता है। फिर बेकार क्यों किसी से लड़ाई मोल ली जावे ?

मदन बहुत बचा लेकिन एक दिन गोपाल उसके कमरे में चला ही गया और अपनी यह राय ज़ाहिर की कि बिना मिले वह नहीं जायगा। दोस्त तो दोस्त ; चाहे शैतान हो या भगवान हो। जिसे दोस्ती करने का ढंग मालूम है, साथ ही साथ अपनी भलमनसाहत का ख्याल है वह कभी भी अपने यहाँ आये हुए का अपमान नहीं कर सकता। गोपाल की बातों को सुनकर मदन अपने कमरे में आ पहुँचा और गोपाल से बड़े प्रेम के साथ

मिला। चा-पानी, पान-पत्ती से उसकी आवभगत की। पहिले तो गोपाल ने 'नाहीं' कर दिया लेकिन बाद में मदन के बहुत कुछ कहने सुनने पर वह खाने-पीने को तैयार हुआ। खा-पीकर उसने मदन से कहा—"कौन जानता था कि वह औरत तुम पर भी अपना जादू डाल देगी ? खैर, जहाँ अमार मिलें वहाँ फिर ग़रीबों को कौन पूछता है ?"

पुरानी बात छेड़कर कुछ कहने का इरादा मदन की समझ में आ गया। उसने घुमाते-फिराते गोपाल की बातों का जवाब दिया—"जहाँ पर रसिक शिरोमणि गोपाल की रास-लीला और चीर-हरण ज़ोर मार रहा हो वहाँ फिर मदन को कलंकित न होना पड़े यह बड़े ही ताज्जुब की बात होगी।"

गोपाल—"तभी तो मदनगोपाल का नाम मशहूर होगा। नेकी करके कभी कोई दुनिया में मशहूर नहीं हुआ। अगर कोई हुआ भी है तो बहुत दिनों के बाद। रावण अगर सीता-हरण न करता तो मशहूर न होता, कंस अगर अपने बाप को क़ैद में न डालता तो फिर उसे कौन जानता, कृष्ण अगर गोपियों से छेड़ छाड़ न करते तो फिर पूर्ण अवतार न कहलाते; पृथ्वीराज अगर संयोगिता को लेकर न भाग जाता तो, चंदबरदाई उसकी तारीफ़ में पृथीराज रासो न लिखता; जहाँगीर अगर नूरेजहाँ से मुहब्बत न करता तो फिर उसका कोई नाम न लेता। कलंक का टीका ही आगे चलकर नामवरी का चमकता सितारा बन जाता है, फिर कलंक से डर कैसा ?"

मदन—"मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि तुम बड़े चतुर बात करने वाले हो।"

गोपाल—"इसमें चतुरता की कौन सी बात हुई?"

मदन—"अच्छा यह तो बताओ कि अब आश्रम का काम किस तरह चल सकता है?"

गोपाल—"जिस तरह अभी तक चलता आ रहा है उसी तरह चल सकता है।"

मदन—"मैं चाहता हूँ कि उसमें कुछ सुधार किया जाय।"

गोपाल—"सुधार क्या होगा? सभी आश्रम इसी ढर्रे पर चल रहे हैं।"

मदन—"मैं यह चाहता हूँ कि जो औरतों की संस्था है उसमें औरतों का ही हाथ रहना चाहिए। तभी यह काम ठीक ठिकाने से चल सकता है।"

गोपाल—"मैं यह मानता हूँ लेकिन अभी औरतों में इतनी दम कहाँ?"

मदन—"यह मत कहो। औरतों में जो दम है वह मर्दों में नहीं है।"

गोपाल—"बिलकुल ग़लत है, बिना मर्दों के सहारे औरतें चल ही नहीं सकतीं।"

मदन—"ख़ैर, अब तजुर्बा किया जाय। मुमकिन है कि मेरी बात सही निकले।"

वे दोनों इसी तरह बातें कर ही रहे थे कि इतने में राधा

और केतकी के साथ सुन्दर वहाँ पर आ पहुँचा। केतकी को देखते ही गोपाल सहम गया। केतकी ने मदन से कहा—"आपके दोस्त गोपाल बाबू का हाल सुनकर मुझे बड़ा रंज हुआ।"

मदन ने जवाब दिया—"फिर भी ये मेरे दोस्त हैं। अच्छा होगा कि अब तुम इनकी जगह काम करो। आश्रम की मान-मर्यादा अभी तक क़ायम है। तुम आगे चल कर इसको सम्हाल लोगी यह मेरा विश्वास है।"

केतकी कुछ कहने ही जा रही थी कि इतने में राधा बोल उठी—"मैं आप लोगों से परिचित तो नहीं हूँ फिर भी आशा करती हूँ कि आप लोग मेरी बातों पर ध्यान देने की कृपा अवश्य करेंगे।"

गोपाल ने कहा—"हाँ हाँ, आप संकोच मत करें। ध्यान देने के लिए ही तो मदन बाबू ने महिला-आश्रम खोला है। जो चाहे वह दिल खोल कर खुले मैदान में अपनी अपनी राय ज़ाहिर कर सकता है।"

सुन्दर ने गोपाल से कहा—"अफ़सोस है कि आप को बातें करने तक का भी ढंग नहीं मालूम है। आप ने अपने को क्या समझ रखा है?"

"मैं मदन बाबू का दोस्त हूँ बस इतना ही मैं अपने को समझता हूँ।"

"दोस्त बनकर भी जब आप दोस्त के नाम पर बट्टा लगाने

पर तुले हुए हैं तब आप ही बताएँ कि आपके साथ कैसा बर्ताव किया जाना मुनासिब होगा।"

"जब देखो तब राह चलती औरतों की तरफ़दारी करते हो और चले हो शराफ़त की नसीहत देने? नाम कमाने का अच्छा ढंग सीख लिया है!"

केतकी ने गोपाल से कहा—"बस, आप जीभ क़ाबू में रखें। जो चोर है उसे दुनिया भर में चोर ही चोर दिखाई पड़ते हैं। आप के दिमाग़ में यह बात समाई हुई है कि औरतों से बातें करने वाले सभी आदमी नापाक हैं। लेकिन आपको यह याद रखना चाहिए कि सुरमा सभी लगाते हैं लेकिन सब की चितवन एक-सी नहीं होती। आप किस दिमाग़ में भूले हुए हैं?"

राधा ने केतकी से पूछा—"क्या यही गोपाल बाबू हैं?"

"हाँ, ये वही गोपाल बाबू हैं जिन्हें एक औरत ने रस्सी से बाँध दिया था।"

मदन ने केतकी से कहा—"गोपाल बाबू का ज़िक्र छोड़ो।"

गोपाल ने मदन से कहा—"तुम्हारे यहाँ मेरी ऐसी तौहीनी होगी, यह कौन जानता था?"

सुन्दर—"आप की तौहीनी आप के हाथ से हुई। आप क्यों औरतों से मुँह लड़ाते हैं? अपनी इज्ज़त अपने हाथ में रखना चाहिए।"

गोपाल—"इन औरतों के डर से क्या लखनऊ छोड़ दूँ?"

सुन्दर—"लखनऊ छोड़ें या न छोड़ें लेकिन आश्रम तो छोड़ना ही पड़ेगा।"

गोपाल—"अच्छा, यह बात है ?"

सुन्दर—जी, हाँ । आपकी सेवा देख ली गई ।"

गोपाल—"तो फिर मैं आज से ही अलग होता हूँ ।"

केतकी—"बड़ी ख़ुशी की बात है । कहिए, टिकट कहां का मँगाया जावे ?"

गोपाल ने झुँझलाकर कहा—"जहन्नुम का ।"

केतकी—"जहन्नुम में तो अभी रेल बनी ही नहीं फिर टिकट कैसा ?"

सुन्दर—"जहन्नुम के लिए तो पैदल ही जाना ठीक होगा ।"

राधा—"बेकार क्यों तंग किया जा रहा है ?"

गोपाल ने मदन से कहा—"तुम्हारे सामने मेरी यह दुर्दशा हो रही है और तुम कुछ बोलते तक भी नहीं । अच्छा, अब मैं जाता हूँ । वाह रे लखनऊ ! तूने तो मेरी नाक में दम कर दिया !" कह कर गोपाल चला गया ।

गोपाल के चले जाने पर मदन ने सुन्दर से राधा के बारे में पूछा—"ये देवी जी कौन हैं ? यहाँ पधारने की कृपा क्यों की ?"

संक्षिप्त हाल बतलाकर सुन्दर ने राधा को परिचित करा दिया और अपनी राय ज़ाहिर की कि राधा और केतकी की देख-रेख में निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम का काम सौंप दिया जावे । वहाँ पर मर्दों का आना जाना बिलकुल रोक दिया जावे । तभी आश्रम पाक-साफ़ रह सकता है ।"

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

प्रतिभा के पिता कलकत्ते में जूट का रोज़गार करते थे। रोज़गार में काफ़ी लाभ होता था इसलिए उन्होंने कलकत्ते में ही कई मकान ख़रीद लिये थे और बड़ी ही शान के साथ अपना जीवन निर्वाह करते थे। प्रतिभा को छोड़कर उनके कोई दूसरी सन्तान न थी इसीलिए उन्होंने प्रतिभा की पढ़ाई-लिखाई आदि में बड़ी दिलचस्पी ली थी। नाचना और गाना सिखाने के लिए उन्होंने हमारे पूर्व परिचित मिस्टर चटर्जी को अपने यहाँ रख लिया था। समय बीतने पर एक दिन मिस्टर चटर्जी प्रतिभा को धोखा देकर उसे घर से निकाल लाये और नाटक कम्पनी खोलने की ठान ली। प्रतिभा को भी एक्ट्रेस बनने की बड़ी रुचि थी। मिस्टर चटर्जी ने उसे यह सुझा दिया था कि एक्ट्रेस बनने पर उसका नाम अमर होगा और नाम के लिए प्रतिभा का जी पागल हो गया।

धीरे धीरे प्रतिभा को मिस्टर चटर्जी की चाल मालूम हुई और उसे यह भी मालूम हुआ कि नाचना-गाना भले घर की बहू-बेटियों को शोभा नहीं देता। थोड़े से अमीरों का गिरोह जो वाह वाह करता है उसमें भी कला की वाह वाह नहीं है। वाह वाह के सहारे वे अपने दिल में कुछ दूसरी ही चालें सोचा करते हैं। ग़रीबों के पास इतना रुपया कहाँ जो कि नाच तमाशे में ख़र्च करें। यह सब समझने पर भी उसने तुरंत मिस्टर चटर्जी

का साथ छोड़ना इसलिए नहीं पसंद किया कि जब तक पूरी ताक़त न हो तब तक काम करना ठीक नहीं है। जब उसकी जैसी दो चार और संगिनी मिल गईं तब उसने एकदम बग़ावत कर दी और मिस्टर चटर्जी को छोड़ कर सीधा कलकत्ते आई और अपने बाप का पता लगाने लगी।

कलकत्ते में आते ही उसे मालूम हुआ कि उसके लापता होने के कुछ ही महीने बाद उसकी माता मर चुकी और बाप का कुल रोज़गार टूट गया है। अब वह फ़क़ीर बनकर इधर उधर घूम रहा है। इस समाचार से प्रतिभा को बड़ा ही रंज हुआ। पर क्या करती? वह कलकत्ते से लौट पड़ी और जगन्नाथ पुरी को रवाना हो गई। सारांश यह कि अब वह बिलकुल ग़रीब हो गई। न खाने को दाना रहा, न पहिनने को कपड़े। लेकिन जिसने अमीरी को लात से मार कर ठुकरा दिया हो वह भला कब ग़रीबी से घबड़ा सकता है?

दो दिन में वह जगन्नाथ पुरी पहुँच गई। भूख से जी तिलमिला रहा था। काले रंग के उड़िया इधर-उधर घूम रहे थे। जगन्नाथ स्वामी के विशाल मंदिर में पहुँच कर उसने देखा कि मन्दिर के उत्तरी हिस्से में दाल और भात बँट रहा है लेकिन जिसने कभी किसी से अपने लिए कुछ भी नहीं माँगा। आज भला वह क्यों कर मुट्ठीभर भात के लिए हाथ फैलाने लगा? थोड़ा सा पानी पीकर उसने जी को शान्त किया और भगवान

जगन्नाथ स्वामी के सामने हाथ जोड़ कर गाना शुरू कर दिया :—

"तुमको छोड़ किधर जाऊँ ?

मन-मानस की लहर लहर में प्रतिभा जिसकी लहराती ;
करुणा की नव कोमल लतिका जीवन पथ पर छहराती ।

रोम रोम में रमें तुम्हीं हो क्यों न तुम्हें अब अपनाऊँ ?
व्यापक ब्रह्म तुम्हीं हो स्वामी तुमको छोड़ किधर जाऊँ ?

हो करोड़ पति या हो भूपति सब के दिव्य मनोरथ हैं ;
किन्तु अश्रु जल से ही प्लावित दीन जनों के सब पथ हैं ।
यों तो करुण कहानी मेरी है अनन्त मैं क्या गाऊँ ?
किन्तु सुनाऊँगी थोड़ी सी तुमको छोड़ किधर जाऊँ ?

अपना-सा संसार बनाया सपना-सा सुख को पाया ;
ज्यों ही सुख अपनाने दौड़ा त्यों ही दुख सम्मुख आया ।
पतनोत्थान राह है रोके सरल मार्ग कैसे पाऊँ ?
राह बता दो अब हे भगवान् ! तुमको छोड़ किधर जाऊँ ?"

गाना समाप्त होते ही वह देखती है कि उसके चारों ओर बड़ी भीड़ लगी हुई है । उसने उस भीड़ को देख कर फिर भगवान् से कहा—"नाथ ! आप तो अनाथों के नाथ हैं, जगन्नाथ हैं, क्या आपके यहाँ भी मुझे डर कर रहना पड़ेगा ? क्या आपने स्त्री जाति की सृष्टि इसीलिए की है कि वे कहीं भी बेखटके न रह सकें ? स्त्रियों में सुन्दरता क्या आपने इसीलिए दी है कि

हर समय उन्हें मुसीबतों का सामना करना पड़े ? बड़े बड़े काले केश, कोमल अंग, मोहिनी आँखें, मीठा स्वर, क्या आपने स्त्रियों को इसीलिए दे रखे हैं कि इनकी बदौलत स्त्रियाँ कभी स्वतंत्र न हो सकें और हमेशा पुरुषों के चंगुल में फँसी रहें ? भगवन् ! बोलो, एकबार बोलो, इतनी सुन्दरता देने का कारण क्या है ? बोलते क्यों नहीं ? क्या तुम भी रूठ गये ? क्यों न रूठोगे ? आख़िर तुम भी तो पुरुष ठहरे, केवल पुरुष ही नहीं परम पुरुष ? बहन सुभद्रा ! तुम तो स्त्री हो ? तुम्हीं बताओ, स्त्रियों को इतनी सुन्दरी बनाकर पैदा करने का रहस्य क्या है ? क्यों पुरुष जाति स्त्रियों को अपने चंगुल में फाँस कर रखना चाहती है ? क्या पतन का कारण स्त्री-समाज ही है ? स्त्रियाँ क्या इस योग्य नहीं हैं कि वे भी स्वतंत्र हो सकें ? बहन का नाता क्या तुम्हें भी स्वीकार नहीं है ? क्या मैं इतनी पतित हूँ कि मुझसे बोलना भी तुम्हें पसंद नहीं ? मैंने जीवन में कोई अपराध नहीं किया है, फिर मुझपर अप्रसन्न क्यों हो ? बहन सुभद्रा ! एक बार बतला दो, कि मैं अब क्या करूँ ? किधर जाऊँ ?" कहते कहते प्रतिभा बेहोश होकर गिर पड़ी।

इतने में एक भिक्षुक आगे बढ़ कर प्रतिभा के पास बैठ कर उसके सर पर पानी डालने लगा और ताड़ के पत्ते से हवा करने लगा। थोड़ी देर में प्रतिभा होश में आगई और अपने को एक भिक्षुक के पास देख कर बड़ी चकित हुई। भिक्षुक को देखते ही प्रतिभा फूट फूट कर रोने लगी और बोली—"पिता जी ! मेरे लिए तुम भिक्षुक भी बने ?"

भिक्षुक—"बेटी ! जब तुमने मुझे छोड़ा तब फिर दुनिया कहाँ ? मैं हमेशा ही तुम्हारे साथ रहा लेकिन कहीं तुम्हें दुःख न हो इसलिए अपने को प्रकट नहीं किया। जिन दिनों नाटक कम्पनी लखनऊ गई हुई थी उन दिनों मैं फ़क़ीर बनकर वहाँ भी घूमता रहा। तुम्हें इन सब बातों का क्या पता है ?"

प्रतिभा ने कहा—"पिता जी ! ग़रीब बनने पर ही तुम मिले। जब तक मैं अमीर थी। नाटक कम्पनी में काफ़ी रुपया पैदा करती रही तब तक आप न मिले। इसका कारण क्या है ? उस समय मिलने पर मुझे क्या दुःख होता ?"

भिक्षुक—"जब तक मनुष्य अपने मन की अभिलाषा पूरी नहीं कर लेता तब तक वह अपने रास्ते से नहीं लौटता और जो लौटाना चाहता है उस को ही वह अपना बैरी समझ लेता है। इसीलिए मैं तब तक प्रकट न हुआ जब तक तुम्हारी एक्ट्रेस बनने की अभिलाषा पूरी न हुई। साथ साथ रहने का अभिप्राय यह था कि अगर वह पापी तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध किसी भी प्रकार का व्यवहार करता तो उसी क्षण मैं उसको खून कर डालता।" कहकर भिक्षुक ने प्रतिभा को अपना पिस्तौल दिखाया। पिस्तौल देखकर प्रतिभा सहम गई।

इधर धीरे धीरे भीड़ खिसती गई। प्रतिभा ने कहा—"मान लीजिए, अगर मैं तैयार हो जाती और वह पापी अपने पाप की सीमा पार कर जाता तब ?"

"इसी पिस्तौल से अपने जीवन का अन्त कर देता। बेटी! लेकिन मैं यह अच्छी तरह जानता था कि तुम असली खून की लड़की हो। ऐसा तुम कभी न करोगी। खैर, ईश्वर को धन्यवाद है कि वह समय नहीं आया। तुम पवित्र ही बनी रही।"

इस तरह की बातें हो ही रही थीं कि अचानक मन्दिर के बाहर बड़े ज़ोरों की चिल्लाहट हुई। सब के सब उधर ही चल पड़े। प्रतिभा भी अपने पिता के साथ चल पड़ी। वहाँ पर जाकर देखती है कि एक युवक अचेत अवस्था में पड़ा हुआ है। उसके समीप जाकर प्रतिभा ने देखा तो वह और कोई दूसरा न था। वह तो थे मिस्टर चटर्जी। भिक्षुक तुरंत उनकी भी सेवा में लग गया। मिस्टर चटर्जी भी सचेत हो गये और बड़े ही विनीत भाव से बोले—"प्रतिभा! आज से मैं अपने अपराधों की क्षमा चाहता हूँ। तुमको मैं अपनी धर्म की बहन मानता हूँ। अब मैं भी ग़रीब बनकर ही रहूँगा। अमीर बनने के रास्ते में सिवा पतन के और कुछ नहीं। अब मैं चला। फिर कभी भेंट होगी।" इतना कह कर मिस्टर चटर्जी वहाँ से चले गये। प्रतिभा की आँखों में आँसू झलकने लगे।

सोलहवाँ परिच्छेद

दो साल का समय बीत गया। जगन्नाथ पुरी से चलकर मिस्टर चटर्जी सीधा नवद्वीप चले गये। नवद्वीप बंगाल का छोटा सा तीर्थस्थान है। चैतन्य महाप्रभु का यहीं पर अवतार हुआ था। यहाँ पर आते ही उन्होंने अपना सब ढंग ही बदल दिया। गेरुआ कपड़े पहन तथा बालों को घुटा कर वे वैष्णव संन्यासी बन गये और नीचे लिखे बंगला गीत को कीर्तन के स्वर में गाते हुए देश-भ्रमण करने लगे।

"तोमाय छेड़े नाइ गो धराय डाकिब याके आपन बले ;
काँदिछि बसिया आँधार घरे प्रतिभा आमार गियेछे चले।
देखिनू यखन नयन भरे "मंजुल" जीवन प्रतिभा राशि ;
समाज-बंधन छिन्न करे मुक्त हृदये भाल बासि।
प्रेमेर पथेर कांगाल आमि प्रेम-धनी के पाइब कोथा ?
केह एखन नाइ गो आमार सुनाई याके मनेर व्यथा।
आमार काछे तोमार छबि सिक्त करिब नयन-जले ;
तोमाय छेड़े नाइ गो धराय डाकिब याके आपन बले।"

घूमते-घामते मिस्टर चटर्जी फिर संयुक्त प्रान्त में आ गये और बनारस में अपना नाम प्रेमानंद सरस्वती रखकर रहने लगे। एक दिन उनके पास एक नवयुयक आ पहुँचा और बोला—"स्वामी जी नमोनारायण।"

प्रेमानंद—"नमोनारायण।"

युवक—"आप जो बंगला गीत गाते हैं क्या उसका अर्थ मुझे भी समझाने की कृपा कीजिएगा ? मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं उसे समझ लूँ।"

प्रेमानंद—"समझ कर क्या करोगे ? जितना न समझो उतना ही अच्छा।"

युवक—"लेकिन मेरा जी मानता ही नहीं।"

प्रेमानंद—"जब जी नहीं मानता तब उसे मनाने की चेष्टा करो।"

युवक—"सब चेष्टा कर चुका; तभी तो आप से प्रार्थना कर रहा हूँ।"

प्रेमानंद—"एक दिन वह मेरा भी था जब कि मेरा भी जी नहीं मानता था। परिणाम यह हुआ कि आज प्रेमानंद सरस्वती कहलाता हूँ। कौन जानता है ? मुझमें प्रेम है या नहीं ? अच्छा, मैं बंगला गीत का अर्थ बताता हूँ। इस संसार में तुम्हें छोड़ कर और दूसरा कोई ऐसा नहीं है जिसे कि मैं अपना कह कर पुकारूँ। मेरी प्रतिभा मुझे छोड़कर चली गई है। मैं अँधेरे घर में बैठा रो रहा हूँ। जिस समय "मंजुल" जीवन की प्रतिभा राशि को नयन भर कर देखा उसी समय समाज के बंधन को तोड़ कर मैंने उससे मुक्त हृदय से प्रेम किया। मैं प्रेम के पथ का कंगाल हूँ। प्रेम के धनी को कहाँ पाऊँगा ? अब मेरा कोई ऐसा नहीं है जिसे कि मैं अपनी व्यथा सुनाऊँ। तुम्हारी तसवीर मेरे पास है;

उसी को अपने आँसुओं से तर करूँगा क्यों कि इस संसार में तुम्हें छोड़कर और दूसरा ऐसा नहीं है जिसे कि मैं अपना कह कर पुकारूँ।"

युवक—"बहुत अच्छे भाव हैं। दुनिया में अगर प्रेम न होता तो दुनिया रूखी हो जाती। लेकिन प्रेम का अनुभव किया हुआ रास्ता कैसा है यह आज तक मेरी समझ में न आया। प्रेम प्रेम कहकर दुनिया चिल्लाती तो है परंतु होता कुछ नहीं।"

प्रेमानंद—"प्रेम चिल्लाने की वस्तु नहीं है। प्रेम हृदय में आपही आप पैदा होता है और कामना-हीन कल्पना जगत में आनंद बढ़ाने का सहायक होता है। प्रेम तो ईश्वर की प्रतिभा का वह आदर्श है कि जिसके सामने अन्याय, अत्याचार, दुराचार, व्यभिचार, लड़ाई-झगड़े, कूटनीति भरी हुई राजनीति की चालें सभी बेकार हो जाती हैं। प्रेम वह अमृत है जिसके धारण करते ही संसार भर की जलन आपही आप शीतल पड़ जाती है। खून की नदियाँ एकदम सूख जाती हैं और उनके स्थान में दूध की नदियाँ बहने लगती हैं।"

युवक—"आजकल देशभर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे जो हुआ करते हैं इसका रहस्य क्या है? ये किस तरह रोके जा सकते हैं? क्या आपने कभी इस पर विचार करने की कृपा की है? इन झगड़ों से देश चौपट होता जा रहा है।"

प्रेमानंद—"बस प्रेम का अभाव है। हिन्दू न तो हिन्दू से प्रेम करते हैं और न मुसलमान मुसलमान से। बस झगड़े की जड़ यहीं पर है।"

युवक—"यह कैसे ? हिन्दू का प्रेम अगर हिन्दू से हुआ और मुसलमान का प्रेम अगर मुसलमान से हुआ; तो ऐसी दशा में हिन्दू-मुस्लिम दंगा कैसे रुक सकता है ?"

प्रेमानंद—"जहाँ पर स्वार्थ है वहाँ प्रेम नहीं। आजकल सभी स्वार्थ के कीड़े बन रहे हैं; चाहे हिन्दू हों या मुसलमान। अपने अपने स्वार्थ के लिए ही मन्दिर और मस्जिद, नमाज़ और आरती; के बहाने लड़ाइयाँ होती रहती हैं; लेकिन जो शरीफ़ हैं, जिनमें कायरता नहीं है, जो कि ख़ुदा के सच्चे बन्दे हैं, ईश्वर की उपासना में जो पक्के हैं, जिनके हृदय में देश की मर्यादा का अभिमान है, जो अपने वतन के नमक का ख़्याल रखते हैं, जिनमें हिन्दू होने का गर्व है, जो इस्लाम के नाम पर धब्बा लगाने को तैयार नहीं हैं; वे कभी भी अपने हम-वतन, भाई का, अपने देश के एक होनहार बहादुर का ख़ून बहाने को आगे न बढ़ेंगे। जिसे अपनी माँ के दूध का ख़्याल है, जिसे देश के असंख्य ग़रीबों के दिल की आह मिटानी है, जिसे वतन की आज़ादी के लिए हर एक तरह से नई तैयारी करनी है; वह भला कब आपस में ख़ून की नदी बहा सकता है ? जब स्वार्थ दबा बैठता है तभी सब झगड़े होते रहते हैं। स्वार्थी का जीवन कैसा होगा यह जानने का सबसे अच्छा तरीक़ा यही होगा कि दस पाँच कुत्तों के बीच में रोटी का एक टुकड़ा डाल दो। देखोगे, वे किस तरह उस टुकड़े के लिए आपस में लड़ते हैं। बस ऐसा ही झगड़ा स्वार्थियों का भी होता रहता है।"

प्रेमानंद की बातों को सुनकर युवक बहुत प्रसन्न हुआ। उसने फ़िर प्रश्न किया—"जब स्वार्थ का झगड़ा है तो फिर इसका धर्म या मज़हब से क्या सम्बन्ध है ?"

प्रेमानंद—"कुछ भी नहीं। यह तो एक चाल है। जिनमें शिक्षा की कमी है, जो अपढ़ हैं, थोड़े से लालच में ही जो अपना रास्ता बदल सकते हैं; ऐसे आदमी धर्म और मज़हब, ईश्वर और ख़ुदा के नाम पर मरने और मारने को तुरंत तैयार हो जाते हैं ?"

युवक—"लेकिन इस तरह के आदमियों में ग़रीबों की संख्या ही अधिक है। देश में जब जब हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए तब तब ग़रीबों का ही नुक़सान हुआ। फिर ये ग़रीब क्यों नहीं सम्हल कर चलते ? क्यों ऐसी मूर्खता करते हैं ?"

प्रेमानंद—"पानी कितना शीतल है लेकिन जब वह उबाला जाता है तब वह इतना गर्म हो जाता है कि देह जल जाती है। ठंडा पानी ऐसा क्यों हुआ ?"

युवक—"चूँकि आगपर उबाला गया इसलिए।"

प्रेमानद—"अगर कोई उस पानी से जल जाय तो क्या अपराध पानी का है ?"

युवक—"पानी का अपराध क्यों होगा ? उसे क्या पता कि वह क्या से क्या हो गया है ? यह तो उबालने वाले की नासमझी है जो कि उसे सम्हाल न सका।"

प्रेमानंद—"देश के कुछ लोग ऐसे हैं जो कि ग़रीबों में जोश पैदा करते रहते हैं और यह चाहते हैं कि उन्हें देश की नेतागिरी

मिल जाय। हिन्दू हिन्दू-सभा का संगठन कर रहे हैं और मुसलमान मुस्लिम लीग आदि का। जहाँ पर एक रास्ते का संगठन न होकर अपनी अपनी डफली और अपने अपने राग के गीत गाये जाते हों वहाँ पर इस तरह के झगड़े हों तो कोई ताज्जुब की बात नहीं है। जब से देश में मज़बूत संस्थाओं का संगठन होने लगा तभी से हिन्दू-मुस्लिम दंगे होने लगे। शायद इन संस्थाओं को कमज़ोर बनाने के लिए यह सब किया जा रहा हो, क्यों कि ये हिन्दू-मुस्लिम दोनों को ही प्रेम के एक सूत्र में बाँधने के लिए दिनरात कोशिश करती हैं। हिन्दू-मुस्लिम संगठन अगर कामयाब हो गया तो फिर दुनिया की कोई भी ताक़त हिन्दुस्थान को दबाकर नहीं रख सकती। स्वतंत्रता के लिए, आज़ादी के लिए, ग़रीबों की ग़रीबी दूर करने के लिए जितने उपाय सोचे जा रहे हैं वे तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक कि हिन्दू-मुसलमान का संगठन नेक-नीयती के साथ पक्का नहीं होता। जिस तरह विभीषण के कारण रावण की हार हुई, जयचन्द के स्वार्थ ने पृथ्वीराज को बन्दी बनाया, मीर जाफ़र की वजह से सिराजुद्दौला गद्दी से उतारा गया, उसी तरह देश के दुर्भाग्य से, वतन की बदनसीबी से, थोड़े से स्वार्थियों के कारण देश को आज़ाद होने का मौक़ा नहीं मिल रहा है और हमारे देश की मज़बूत संस्थाओं के रास्ते में रोड़े अटकाने के लिए हिन्दू-मुस्लिम दंगे कराये जा रहे हैं।"

युवक—"आज आपने बहुत पते की बातें बताईं।" फिर कभी आपके दर्शन करूँगा। मुझे तो आज बड़ा आनंद आया।"

सत्रहवाँ परिच्छेद

मनोहर फिर अकेला रह गया। मिस्टर चटर्जी का हाल तो पाठकों को मालूम ही हो चुका है। प्रयाग में मनोहर ने यह चाहा कि एक नई नाटक कंपनी खोली जावे परंतु कामयाब न हुआ। रुपये कमाने के जितने भी ढंग हो सकते हैं सभी को काम में लाया; लेकिन इससे होता क्या है? जब तक़दीर ही साथ नहीं देती तब तदबीर कर ही क्या सकती है?

आखिर उसने एक उपाय निकाल ही लिया। उन दिनों प्रयाग में शुद्धि का काम बहुत ज़ोरों से चल रहा था। हिन्दू, मुसलमानों को शुद्ध करके हिन्दू बना कर अपने को धन्य बनाना चाहते थे और मुसलमान हिन्दुओं को इस्लाम मज़हब में शामिल करके अपनी तादाद बढ़ाने की फ़िक्र में थे। इस समय का फ़ायदा उठाने के लिए मनोहर तैयार हो गया। उसने तुरंत एक नोटिस छपाई और उसे शहर में बँटवा दिया। नोटिस इस तरह की थी:—

हिन्दुओं से अपील

अगर धर्म नहीं तो फिर जीवन से लाभ क्या?

भाइयो! मैं एक हिन्दू होने के नाते आप सब भाइयों से एक अपील करता हूँ कि आर्थिक कठिनाई के कारण अब मेरा धर्म जाने वाला है। अगर हिन्दू होने के नाते मुझे दर दर ठोकरें

खानी पड़ें तो इससे अच्छा है कि मैं किसी दूसरे मज़हब को ही अपना लूँ। अगर हिन्दुओं में दम है, अगर वे अपने धर्म को चलाना चाहते हैं तो आवश्यकता इस बात की है कि मेरी सहायता करने की कृपा अवश्य करें नहीं तो मैं सात दिन के बाद विधर्मी बन जाऊँगा।

विनीत

मनोहरलाल

अब क्या था ? हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उसके पास आने लगे। दो चार ईसाई पादड़ी भी आये और ईसा मसीह का गुण-गान करने लगे। मनोहर ने साफ़ साफ़ कहा—"मै सिर्फ़ रुपये के लिए मज़हब बदलना चाहता हूँ। मुझे रुपये की चाह है; अमीर बनने की तमन्ना है; ऐश व आराम हासिल करने की हवस है। जिस मज़हब के नुमायन्दे मेरी इन सब बातों को पूरी करेंगे मैं उन्हीं का मज़हब मान लूँगा। अगर आराम नहीं तो फिर मज़हब बदलने से फ़ायदा ?"

पहिले तो हिन्दुओं ने बड़ा ज़ोर मारा लेकिन जब रुपये का सवाल आया तब वे पीछे हट गये। मुसलमानों की पारी आई। उन्होंने भी नक़द देने से इंकार कर दिया। पादड़ी साहब ने मनोहर की सब शर्तें मंज़ूर कर लीं और उसे अपने साथ ले गये। बड़े प्रेम के साथ खाना खिलाया। दो चार रुपये जेब खर्च के लिए भी दिये। मिसों का मंडल हमेशा मनोहर के साथ साथ रहने लगा। मनोहर की तबियत ख़ुश हो गई। तमन्ना पूरी होगी

यह उम्मीद पक्की हो गई। एक दिन पादड़ी साहब ने मनोहर से पूछा—"क्या आप ईश्वर को जानते हैं ?"

मनोहर—"जी नहीं, अगर ईश्वर को जानते होते तो फिर आपके पास क्यों आते ?"

"अच्छा, आप यह बताएँ कि ईमानदार कैसे बना जाता है?"

"यह तो वही बता सकता है जो कि पहले कभी बेईमान रहा हो और बाद में फिर ईमानदार बना हो। मैं क्या बताऊँ ?"

मनोहर बड़ा ईमानदार है यह पादड़ी साहब ने उसके इस जवाब से समझ लिया। उन्होंने उससे फिर पूछा—"ईमानदार किसे कहते हैं ?

"जिसका ईमान सच्चा हो।"

इतने में गिरजाघर में घंटा बजने लगा। पादड़ी साहब ने मनोहर से कहा :—

"चलिए, ईश्वर के मन्दिर में चलें।"

"मैं वहाँ जाने को तैयार नहीं हूँ।"

"क्यों ?"

"मुझे जाने में वहाँ डर लगता है।"

"डरने का सबब ?"

"ईश्वर के मन्दिर में कहीं शैतान न मिल जाय और मुझे कहीं बहका न दे।"

"अच्छी बात है, आप यहीं पर रहिए।" कहते हुए पादड़ी साहब गिरजाघर चले गये। मनोहर कमरे में अकेला ही बैठा रहा।

पन्द्रह मिनट का ही समय बीता होगा कि इतने में एक मौलाना साहब आ पहुँचे। मनोहर ने बड़े प्रेम के साथ कहा—"आइए जनाब, मैं तो आपका ही इंतज़ार कर रहा था। ख़ुदा की मेहरबानी से आप मिल ही गये।"

मौलाना साहब—"कहिए, आपने क्या तय किया है?"

"तै क्या करना है, मैं तो यह चाहता हूँ कि अमन चैन से जहाँ ज़िन्दगी कटे वहीं मैं रहूँगा। जहाँ चैन है वहाँ अमन है। इस राहे ख़ुदा पर अमन-चैन हासिल करना निहायत ज़रूरी है। लेकिन जब तक गहरी रक़म हाथ नहीं आती तब तक भला अमन-चैन कैसे नसीब हो सकती है?"

मौलाना साहब—"कहते तो आप ठीक हैं लेकिन राहे ख़ुदा पर चलने वाले को अमन-चैन यों ही मिल जाती है फिर ज़रूरत क्या है?"

मनोहर—"मैं ख़्याली पुलाव नहीं पकाता। मुझे जब तक इतमीनान नहीं होता तब तक मैं उम्मीदों पर आगे बढ़ने को क़तई तैयार नहीं हूँ।"

"आप कितना रुपया चाहते हैं?"

मनोहर—"कितना आप दे सकते हैं?"

"देनेवाला ख़ुदा है। मैं आपके लिए बस सिफ़ारिश भर कर दूँगा।"

"तब फिर मैं ख़ुदा से ही बातें करूँगा।"

"आप के पास क्यों ख़ुदा आने लगा?"

"रुपये लेकर और क्यों ?"

"आप उसे पहचानेंगे कैसे ?"

"ज्यों ही उसने चमचमाते हुए रुपये मेरे सामने उड़ेल दिये त्यों ही मैं समझ लूँगा कि यही ख़ुदा है। ख़ुदा को पहचानने में लगता ही क्या है ?"

जहाँ झनकार रुपयों की वहीं पर है ख़ुदा मेरा ;
न हूँ मैं दीन का क़ायल ख़ुदा ही है जुदा मेरा।
चला राहे ख़ुदा पर जो उसी को चैन मिलती है ;
जहाँ है ढेर रुपयों का वहीं दिल का बसेरा है।
जहाँ रुपया नहीं दिखता वहाँ का हाल मत पूछो ;
जलाते हैं चिराग़ों को मगर फिर भी अँधेरा है।
अगर मज़हब है दुनिया में समझ लो बस यही रुपया;
ख़ुदा भी मानता इसको इसी ने दिल को है घेरा।
लड़ाता है यही रुपया मिलाता है यही रुपया ;
यही है घर ख़ुदा का औ यही शैतान का डेरा।
जहाँ झनकार रुपयों की वहीं पर है ख़ुदा मेरा॥

मौलाना साहब ने मुस्कुराते हुए कहा—"आप तो ग़ज़ब के आदमी हैं।"

"अगर ग़ज़ब का आदमी न होता तो फिर ख़ुदा को पहिचानता कैसे ?"

"अच्छी बात है, फिर कभी मिलूँगा।" कहते हुए मौलाना साहब चले गये।

उनके चले जाने पर मनोहर आप ही आप गाने लगा।

"कहता हूँ जियो मतलब के लिए ;
मरना है बुरा मज़हब के लिए।
मतलब को लड़ो मज़हब न कहो ;
काबे में रहो काशी में रहो।
लड़ना है अगर ऐबों से लड़ो ;
बढ़ना है अगर तेज़ी से बढ़ो।
रुपये को जियो रुपये को मरो ;
रुपये के लिए सब ऐब करो।
लड़ते हैं सभी रुपये के लिए ;
अड़ते हैं सभी रुपये के लिए।
कहता हूँ जियो, मतलब के लिए ;
मरना है बुरा मज़हब के लिए।"

ज्यों ही गाना समाप्त हुआ त्यों ही पादड़ी साहब आ पहुँच और मनोहर से बोले।

"आज तो आप बहुत ख़ुश मालूम हो रहे हैं ?"

"जी हाँ, ईश्वर का दूत आकर कह गया है कि मुझ से बहुत जल्द ईश्वर की भेंट होगी। जिस दिन पादड़ी साहब के यहाँ का कुल सामान गुम जाय उस दिन समझना चाहिए कि ईश्वर आने वाला है।"

"यानी ईश्वर के आने से पहले चोर आयगा ?"

"इसमें ताज्जुब की बात कौन सी हुई? बाइबिल में भी तो यही लिखा है कि ईश्वर और शैतान दोनों ही एक जगह रहते हैं। जब ईश्वर के आने का समय आता है तब उसके पहिले शैतान आता है। शैतान शैतानी करता है और ईश्वर उस पर रहम करना सिखाता है। जिस दिन आपके यहाँ चोर आवेंगे उसी के बाद ईश्वर भी मिलेगा। अब आप यह बतावें कि आप अपना माल चाहते हैं या ईश्वर से मिलना चाहते हैं?"

पादड़ी साहब ने कहा—"आज आप कैसी बातें कर रहे हैं?"

मनोहर—"सही सही बातें करना क्यों आप को पसंद नहीं हैं?"

अपने भावों को छिपाते हुए पादड़ी साहब ने जवाब दिया—"मुझे आप की बातें बहुत पसंद आ रही हैं। कहिए, दिल खोल कर कहिए।"

"मैं यही कहना चाहता था कि अगर आपके घर चोरी हो और माल सब गुम जाय तो आप क्या करेंगे? रोयेंगे या चिल्लायेंगे? उस चोर को क्षमा करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करेंगे या पुलिस थाने में रिपोर्ट करेंगे?"

"आपके साथ अपनी लड़की की शादी कर दूँगा।"

"इस से क्या होगा?"

"जितना चोर ले जाँयगे वह सब वापस आ जायगा।"

"यह कैसे हो सकता है?"

"ज़हर की दवा ज़हर है। शैतान को क़ाबू में रखने के लिए

शैतान की ज़रूरत पड़ती है। जब चोर के रूप में शैतान आवेगा तब आप से और उस से तो भेंट होगी ही और जब आप को यह मालूम रहेगा कि आप मेरे बाद इस घर की कुल रक़म के मालिक होंगे तब उस शैतान को समझा बुझाकर आप सब सामान को बचा लेंगे। फिर डरने की कौन सी बात हुई।"

पादड़ी साहब किस ढर्रे पर उसे ले जाना चाहते हैं यह मनोहर की समझ में आ गया। उसने पादड़ी साहब से कहा—"अगर आपकी लड़की के साथ मैं शादी न करूँ तो? क्या आप मुझे इसीलिए ही अपने यहाँ लाये हैं?

"जी नहीं, आपको ईश्वर का सच्चा रास्ता बताने लाया हूँ।"

"कब तक और इंतज़ार करूँ? अगर आप तीन दिन के अन्दर ईश्वर का रास्ता नहीं बताते तो फिर मुझे शैतान के ही रास्ते पर चलना पड़ेगा। फिर आप मेरा कुछ भी नहीं कर सकेंगे।"

अट्ठारहवाँ परिच्छेद

निर्मला अनाथ आश्रम को छोड़ कर गोपाल लखनऊ में ही इधर उधर घूमने लगा। दो चार जगह उसने नौकरी के लिए कोशिश की लेकिन कहीं भी उसे नौकरी न मिली। लाचार होकर उसे लखनऊ को नमस्कार करना पड़ा। वह सीधा बनारस लौट आया। अपना पुराना शहर था इसलिए किसी न किसी तरह शाम तक वह खाने-पीने का इंतज़ाम कर लेता था।

एक दिन अचानक उसे यह ख़बर मिली कि स्वामी प्रेमानंद सरस्वती का व्याख्यान होने वाला है। बेकार तो था ही इसलिए वह व्याख्यान के स्थान का पता लगाने लगा। पता लगाने पर उसे मालूम हुआ कि प्रेमानंद जी का व्याख्यान किसी इमामबाड़े में होने वाला है। मालूम होते ही गोपाल की देह में आग लग गई। हिन्दू संन्यासी का व्याख्यान इमामबाड़े में ! ओह ग़ज़ब होगया ! ज़मीन हिलती तक भी नहीं ! सभी खामोश हैं ! बनारस में मानों हिन्दू रहते ही नहीं !

बस इसी प्रकार सोचता हुआ वह इमामबाड़े में पहुँच गया। वहाँ पर जाकर देखता है कि भीड़ काफ़ी है। आदमी पर आदमी ! तिल रखने भर की जगह नहीं है। किसी न किसी प्रकार वह अन्दर जाकर बैठ गया।

प्रेमानंद जी समय पर आये और आसन पर जाकर बैठ

गये। उनके साथ हमलोगों का पूर्व परिचित युवक था। उसका नाम कैलाश था। कैलाश एक बहुत बड़े अमीर का लड़का था। मगर देशबासी हिन्दू-मुसलमान सभी की सेवा करने के लिए उसने अपना सब कुछ त्याग दिया था। पहिले परिच्छेद में मदन के जो पाँच दोस्त रेल पर चढ़ कर लखनऊ गये थे उनमें से यह भी एक था। मदन के और इसके विचार बहुत कुछ मिलते जुलते थे। गोपाल और मनोहर का हाल पाठकों को मालूम हो गया। और कैलाश का भी कुछ हाल पाठक सोलहवें परिच्छेद में मालूम कर ही चुके हैं।

प्रेमानंद जी के साथ कैलाश को आया देख गोपाल का दिल जल कर ख़ाक हो गया लेकिन कुछ कह न सका। जी मसोस कर बैठा रह गया। प्रेमानंद जी के इशारे पर कैलाश उठकर खड़ा हुआ और गीत गाने लगा।

"आज़ाद रहो, आबाद रहो।
आपस में मिलो बर्बाद न हो॥

अल्लाह कहो रहमान कहो,
श्रीराम कहो भगवान कहो ;

मक्का में वही मदिना में वही,
गोकुल में वही मथुरा में वही,

मंदिर में वही मसजिद में वही,
हममें है वही तुममें है वही,

याद करो गर याद न हो ;
आज़ाद रहो, आबाद रहो ।
आपस में मिलो बर्बाद न हो ॥
करते हो नमाज़ में याद जिसे ;
हिन्दू भी करें नित याद जिसे ।
एक वही भगवान ख़ुदा,
समझो न कभी हर्गिज़ भी जुदा,
एक वतन में सभी हैं पले ;
मिल लो अब भाई गले से गले ।
दिल साफ़ रखो, फ़र्याद न हो ।
आज़ाद रहो, आबाद रहो ।"

गीत सुनकर लोग मस्त हो गये। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, सभी वाह! ख़ूब! वाह! ख़ूब! कहने लगे। इसके बाद बनारस के एक ख़ान बहादुर साहब उठकर खड़े हुए और बोले—"मुल्क के लिए हिन्दू-मुस्लिम दंगा किसी भी हालत में भला नहीं है। न तो इस तरह के दंगों से मुसलमान ही तरक़्क़ी हासिल कर सकते हैं और न हिन्दुओं को भी अमन नसीब हो सकता है।

"हिन्दू हो या मुसलमान, अब तो ज़रूरत इस बात की है कि दोनों एक दिल हो कर मुल्क की आज़ादी के लिए हर एक क़िस्म की मुनासिब तरकीबें सोचें और उन्हें अमल में लायें। मुझे इस सिलसिले में और कुछ नहीं कहना है। हाँ, आप लोगों से इतना अर्ज़ ज़रूर करूँगा कि जब तक स्वामी जी उपदेश दें

तब तक आप लोग ख़ामोशी अख़्त्यार करते हुए निहायत दिल-चस्पी के साथ इनकी सब बातों को सुनें और अमल में लाने की कोशिश करें। इस वक्त़ मुल्क बहुत ख़तरे में है।

"अगर हम लोग आपस में मिलकर नहीं चलते तो फिर वह दिन जल्द देखने को मिलेगा जब कि हिन्दू और मुसलमान दोनों को ही एक एक दाने के लिए दूसरों का मुहताज होना पड़ेगा। इसलिए अगर अब भी समझ कर चला जाय तो भी ग़नीमत है। नहीं तो मंदिर-मस्जिद, नमाज़-आरती, एक भी न रह जायँगे। और ज़्यादा क्या अर्ज़ करूँ। अब आप लोग स्वामी जी का उपदेश सुनें।"

ख़ान बहादुर साहब के बाद स्वामी प्रेमानंद जी खड़े हुए और बोले :—

"भाइयो ! मैं आप लोगों को एक कहानी सुनाता हूँ। तीन रईस थे। तीनों ही बड़े शरीफ़, बड़े बहादुर और आला दर्जे की तालीम पाये हुए थे। एक क़लमी आम का बग़ीचा था। बग़ीचा सिर्फ़ एक का था। साथ रहते रहते दूसरे को भी फल खाने को मिलने लगे। कुछ दिन के लिए पहिला रईस बीमार पड़ गया और दूसरे रईस ने उस पर अपना क़ब्ज़ा कर लिया। जब पहिला रईस सम्हला तब उसने उससे अपना बग़ीचा छीनना चाहा। एक साथ बहुत दिन रहने की वजह से उन दोनों में मेल हो गया।

"रईस नम्बर तीन बाद में आये। उन्हें क़लमी आम बहुत ही

अच्छे लगे। यहाँ तक कि पार्सल कर के वे अपने घर वालों को भी भेजने लगे। और ऐसी मीठी बोली बोलते कि दोनों रईस बातों में ही मस्त हो जाते। यहाँ तक कि दोनों ने कुल बग़ीचे की हिफ़ाज़त का भार उन पर सौंप दिया। बग़ीचे की हिफ़ाज़त के लिए तीसरे रईस ने तरह तरह के क़ानून बनाये और एक दिन वह आया कि अपने बग़ीचे के पेड़ पौदे देखने तक का भी हक़ उन दोनों रईसों को न रह गया।

"जब बहुत कुछ कहा सुना गया कि यह ज्यादती है तब तीसरे साहब यह कहते हैं कि आप लोग बटवारा कर लीजिए या ऐसा कीजिए कि पेड़ पौदे ज़मीन सब आपकी, लेकिन जो फल फलेंगे वे सब मेरे रहेंगे क्यों कि अगर मैं देख भाल न करता तो आप दोनों का यह बग़ीचा कब का उजड़ गया होता। बस इसी टाल मटौल में वक़्त गुज़र जाता है और कहीं कुछ हासिल नहीं होता।

"मतलब यह कि जब आपस में दो लड़ते हैं तब तीसरे को फ़ायदा होता ही है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ये लड़ते क्यों हैं? क्या सचमुच इनमें ईश्वर का प्रेम है? मज़हब की पर्वाह है? मुल्क से मुहब्बत है? कभी नहीं, हर्गिज़ नहीं। सब अपने मतलब के लिए, रोटी के एक टुकड़े के लिए, अपनी निजी भलाई के लिए लड़ते हैं।

"मुहम्मद साहब ने कभी भी अपने दुश्मनों को नहीं कोसा, ईसा मसीह ने उनके लिए भी माफ़ी माँगी थी जिन्हों ने कि

उन्हें सूली पर चढ़ाया था, हिन्दुओं के ऋषि तो यहाँ तक कह गये कि वसुधैव कुटुम्बकम् यानी कुल दुनिया एक ही खानदान है। जब तीनों मज़हब में एक ही प्रेम, एक ही मुहब्बत और आखिरी बात एक ही है तब मज़हब का झगड़ा कहाँ? जब दिल में .खुदा है तब इबादत में रुकावट कहाँ?

"हाँ, जब लड़ने को जी चाहता है तब बहाने सैकड़ों मिल सकते हैं। हिन्दुओं के अरमान अगर तोड़े जाते हैं तो इसका जवाब .खुदा के यहाँ ज़रूर देना पड़ेगा। अगर हिन्दू मुसलमानों को सताते हैं तो उन्हें स्वर्ग नहीं मिल सकता है चाहे गंगा स्नान करें या यमुना, काशी जायँ या हरिद्वार। जो पाप है और जो पुण्य है वह सब के लिए एक सा है? आग, चाहे कोई भी मज़हब वाला छुए वह ज़रूर जलेगा। पानी चाहे किसी भी मज़हब का आदमी पिये उसकी तबियत ज़रूर .खुश होगी। भूख सभी को लगती है, प्यास सभी को लगती है चाहे हिन्दू हो या मुसलमान।

"सूरज की रोशनी, चाँद की चाँदनी, हवा का बहाव, बादलों का पानी, सभी के यहाँ पहुँचता है। हिन्दू अगर मुसलमानों के यहाँ इन सब को न पहुँचने दें या हिन्दुओं के यहाँ पहुँचने में मुसलमान इन्हें रोक सकें तब यह मुमकिन है कि हिन्दू मुसलमान एक न होकर दो हैं। नहीं तो यह सब नासमझी छोड़ कर और कुछ नहीं है। किसी एक ग़रीब की झोपड़ी जला दी, किसी परदेशी का क़त्ल कर दिया, किसी के शादी ब्याह में झगड़ा

कर दिया। किसी नाजायज़ काम के लिए बेकार की दलबंदी करके अपने ही हाथ से अपने भाई का ख़ून किया। यह सब है क्या ? क्या यह सब आज़ादी की निशानी है ? हर्गिज़ नहीं। बल्कि बड़े ही शर्म की बात है।

"चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, सभी आजकल इस तरह के काम करना पसंद करते हैं या नहीं, यह मैं इस समय नहीं कहना चाहता। हाँ, इतना ज़रूर कहूँगा कि जो साहबान इन सब मामलों में किसी न किसी तरह की दिलचस्पी लेते हों उन्हें अब अपना रास्ता बदल देना चाहिए। इससे मुल्क को बड़ी ही मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है। उम्मीद है कि आप सब हिन्दू और मुसलमान मिल कर एक ऐसा रास्ता अख़्त्यार करेंगे जिससे कि मुल्क में अमन और चैन नसीब हो और हम सब आज़ाद होकर देश की तरक़्क़ी के लिए नई नई तरकीबें सोच सकें।

"बस, और ज़्यादा क्या कहें ? उम्मीद है कि आप लोग, देश के लिए, मज़हब के लिए, ख़ुदा के लिए अब कभी भी दिल में मैल नहीं रखेंगे। क्यों कि दिल का मैल ही सब मुसीबतों का असली सबब है। जब दिल साफ़ होगा तभी अच्छी बातों का असर उस पर पड़ सकता है नहीं तो सब बेकार ही होगा।

इतना कहकर स्वामी प्रेमानंद जी बैठ गये। कैलाश ने एक छोटा सा गाना फिर गाया और वह भी हिन्दू-मुस्लिम एकता से सम्बन्ध रखता था।

"ग़रीबों के दिल में .ख़ुदा का ही घर है ;
मुहब्बत है सच्ची किसी का न डर है।
क्या हिन्दू-मुसलमाँ या ईसाई हैं जो ;
ग़रीबों के दिल में सभी भाई हैं वो।
न कोई यहाँ पर हमेशा रहेगा ;
ग़रीबों के दिल का सँदेशा रहेगा।
न रुपया रहेगा न पैसा रहेगा,
ज़माना कभी भी न ऐसा रहेगा ;
न मन्दिर रहेगा न मस्जिद रहेगी,
जहाँ वक़्त आया न फिर ज़िद रहेगी ;
क़यामत सलामत नहीं रख सकेगी ;
व जोशे जवानी अचानक थकेगी।
ग़रीबों के दिल का अँदेशा नहीं है ;
जहाँ लोग क़ाबिल हैं इज़्ज़त वहीं है।
ग़रीबों की भाषा अजर है अमर है ;
ग़रीबों के दिल में ख़ुदा का ही घर है।"

उन्नीसवाँ परिच्छेद

बिजली बाला, मालती और माधवी ये तीनों सब से पहिले अपने अपने घर गईं लेकिन किसी को भी घर वालों ने ठहरने न दिया। जितना हो सकता था उन सबों ने अपनी पवित्रता के प्रमाण भी दिये; लेकिन सब बेकार हुआ। अन्त में उन सबों को फिर वहाँ से वापस लौटना पड़ा। सिवा भगवान के और कोई सहारा न रह गया।

बिजली बाला ने मालती से कहा—"अब भगवान भी साथ न देगा।"

मालती कुछ कहने ही जा रही थी कि इतने में माधवी बोल उठी—"जब जैसी दुनिया होती है तब वैसे ही भगवान भी हो जाते हैं।"

मालती ने समझाते हुए कहा—"ऐसा मत कहो। दुनिया दुनिया है और भगवान भगवान है। भगवान पर दुनिया का असर क्यों पड़ने लगा।"

बिजली बाला—"अगर भगवान पर दुनिया का असर नहीं पड़ता तो फिर हम लोगों को कहीं बैठने की जगह क्यों नहीं मिलती?"

माधवी—"बस यही मेरा भी कहना है। क्या भगवान को यह नहीं मालूम है कि हम सबों का हृदय कितना पवित्र है?"

मालती—"मालूम क्यों नहीं है। भगवान से क्या कोई बात छिपी रह सकती है? कभी नहीं? हाँ, हम लोगों की पवित्रता को देख कर ही भगवान की समझ में यह नहीं आ रहा है कि आश्रय किस जगह दिया जाय! क्यों कि पवित्रता के लिए आश्रय भी पवित्र ही होना चाहिए। नहीं तो फिर पवित्रता की रक्षा नहीं की जा सकेगी।"

मालती इतना कह ही चुकी थी कि आसमान में एक भन्नाहट-सी सुनाई पड़ने लगी। सबों का ध्यान उसी ओर चला गया। देखती हैं कि हवाई जहाज़ उड़ता हुआ चला आ रहा है और उसमें से कुछ काग़ज़ के टुकड़े फूलों की तरह फेंके जा रहे हैं। उड़ता हुआ हवाई जहाज़ चला गया और काग़ज़ के टुकड़े हवा में तैरते हुए ज़मीन पर आने लगे। दस बारह काग़ज़ उस जगह पर भी आकर गिर पड़े जहाँ पर कि वे तीनों खड़ी थीं। उस सबों ने उस काग़ज़ के टुकड़े को उठाया और उसमें जो कुछ छपा था उसे बड़े ध्यान से पढ़ने लगीं।

मालती ने प्रसन्न होकर कहा—"देखा, ईश्वर का विधान कैसा और कितना अच्छा है और डूबते हुए को वह किस तरह बचाता है? गो कि इन काग़ज़ के टुकड़ों ने वही काम किया जो कि डूबते हुए आदमी के लिए एक तिनका करता है। फिर भी सहारा तो मिल गया।"

माधवी ने कहा—"ऐसे सहारे का भरोसा ही क्या है?"

मालती—"ऐसा मत कहो। इस काग़ज़ को फिर से पढ़ो।"

बिजली बाला ने कहा—"मालती कहती तो ठीक है। यह काग़ज़ का टुकड़ा इस समय पाकर मैं तो बहुत .खुश हूँ। हम ग़रीबों के दिल की पुकार उस तक पहुँच गई है इसका सुबूत यही सब काग़ज़ के टुकड़े हैं जो कि नोटिस के रूप में दिखाई पड़ रहे हैं। अब देर करना ठीक नहीं है।"

माधवी—"चलो, वहाँ पर भी चल कर देखा जाय कि क्या होता है?"

बिजली बाला—"सब अच्छा ही होगा। आश्रय ज़रूर मिलेगा।"

मालती—"चलो तो प्रसन्न होकर चलो। क्यों कि सफलता प्रसन्नता पर निर्भर है। जब चित्त खिन्न है तब फिर सफलता कहाँ?"

बिजली बाला—"चलो, गीत गाती हुई चलें। गीत गाने पर सब परेशानी आप ही आप भूल जायगी। कहो, ठीक है, न?"

मालती—"मुझे तुम्हारी राय पसंद आ गई।"

इतना कहकर वे तीनों गाती हुई चल पड़ीं। मन में उत्साह था और परिश्रम में सफलता की आशा थी। फिर वे रुकतीं कैसे।

सौभाग्य से या दुर्भाग्य से दूसरी ओर से गोपाल चला आ रहा था और वह भी अपने राग में मस्त था। मानों उस समय दुनिया में वही अकेला था। बनारस में भी जब उसे शान्ति न मिली और न खाने-पीने का सहारा रहा तब वह कैलाशपति

भगवान शंकर की उपासना करने लगा। हमेशा की तरह आज भी वह बग़ीचे से फूल तोड़कर गाता हुआ चला आ रहा था :—

"नहीं राग मुझमें नहीं रागिनी है;
सकल भावना प्रेम अनुगामिनी है;
जहाँ प्रेम सच्चा वहीं आत्मबल है,
गरल भी अमिय है कुटिल भी सरल है।

"अगर दूर हूँ मैं नहीं हानि कोई;
अगर दीन हूँ मैं नहीं ग्लानि कोई;
अगर भाव मनके चमकते सितारे;
लगेगी कभी नाव निश्चय किनारे।

"हुआ क्या अगर मैं अकेला पड़ा हूँ;
हुआ क्या अगर मैं दुखी भी बड़ा हूँ;
मुझे एक कैलाशपति का सहारा;
हृदय दिव्य जिनका निरुपमेय न्यारा।

"अगर स्वार्थ-परता नहीं है दबाती;
अगर दीनता दीनता है न लाती;
अगर आत्म-गौरव निराला अनूठा;
न होगा कभी प्रेम का तत्व झूठा।

"अगर भारती प्रति तनिक भक्ति है तो;
अगर काव्य में मंत्र की शक्ति है तो;
बिना तार के तार से तार देंगे;
बिना तर्क के प्रेम उपहार लेंगे।"

उधर संगीत और इधर संगीत। संगीत का सामना संगीत से होगया। बिजली बाला ने गोपाल से पूछा—"बनारस से लखनऊ जाने वाली सड़क कौन सी है? क्या आप यह बताने की कृपा करेंगे?"

गोपाल—"मैं स्वयं कृपा का भिखारी हूँ। मेरे पास कृपा कहाँ? कृपा करने वाले तो मुझे दो ही मिले। बनारस में प्रेमानंद और लखनऊ में मदन बाबू।"

माधवी—"हम आप से रास्ता पूछना चाहती हैं। लखनऊ का रास्ता कौन सा है? आप को मालूम है या नहीं?"

गोपाल—"आगे जाइए। प्रेमानंद जी भी इसी रास्ते पर रहते हैं। उन्हें सब रास्ते मालूम हैं। ठीक ठीक रास्ता उन्हीं से मालूम हो जायगा।"

गोपाल चला गया। वे तीनों आगे बढ़ीं। एक मील जाने के बाद उन्हें एक बग़ीचा मिला और उसमें एक झोपड़ी दिखी। पास में पौशाला भी पानी पिलाने के लिए थी। तीनों पानी पीने बैठ गईं। पानी पी चुकने के बाद पानी पिलाने वाले से माधवी ने पूछा—"यह किसकी कुटी है?"

"प्रेमानंद जी इसी में रहते हैं। सुनिए, कैसा अच्छा गीत गा रहे हैं!"

मालती ने कहा—"चलो, महात्मा जी के दर्शन किये जाँय और उनका आशीर्वाद प्राप्त करके आगे बढ़ा जाय।"

बिजली बाला ने कहा—"अच्छी बात है। साधु-संत तो

हमेशा से ही पाक-साफ़ रहते चले आये हैं। इनके पास जाने से चित्त ज़रूर प्रसन्न होगा। इस बनारस में प्रेमानंद जी का बड़ा नाम है। चलो, दर्शन करें।"

झोपड़ी के पास जाकर देखतीं हैं कि एक साइनबोर्ड लटक रहा है। उसमें लिखा है—"माताएँ और बहनें बाहर ही रहें। दर्शन के लिए आई हुई देवियाँ "जीवन-प्रतिभा" कहकर पुकारें। दर्शन अवश्य होंगे।"

प्रतिभा शब्द से वे तीनों चौंक पड़ीं। स्वामी प्रेमानंद सरस्वती, बनारस के एक प्रसिद्ध महात्मा, उपासना जगत के परमत्यागी; इनके यहाँ "जीवन-प्रतिभा" की प्रधानता क्यों? रहस्य कुछ समझ में नहीं आ रहा है!"

माधवी ने मालती से कहा—"प्रतिभा तो हमारी सहेली का नाम था?"

मालती—"क्या दुनिया में दूसरी कोई प्रतिभा हो ही नहीं सकती?"

माधवी—"हो क्यों नहीं सकती लेकिन इतने महत्व की नहीं।"

मालती—"अच्छा, अब बात महत्व पर आई!"

माधवी—"महत्व ही तो शंका पैदा कर रहा है।"

बिजली बाला ने कहा—"बहस करना बेकार है। "जीवन-प्रतिभा" कहकर पुकारा जाय।"

मालती ने पुकारा—"जीवन प्रतिभा!"

तुरंत प्रेमानंद जी बाहर निकल आये। उन को देखकर सब की सब चकित हो गईं। उनकी समझ में न आया कि ये प्रेमानंद जी यहाँ कैसे आ गये? कुछ भी हो, उन सबों को चकित देखकर प्रेमानंद जी ने कहा--"चकित होने की कोई बात नहीं है। मालूम नहीं कि कब किसका कैसा उलट फेर हो जाय!"

माधवी ने कहा—"आप प्रेमानंद कब से बने?"

प्रेमानंद—"जब से प्रेम का असली रूप समझ में आ गया तब से मैं प्रेमानंद बना।"

मालती—"नाटक कम्पनी के मैनेजर मिस्टर चटर्जी भी कभी प्रेमानंद सरस्वती बनेंगे इसकी तो कल्पना तक भी नहीं की जा सकती थी।"

प्रेमानंद--"संगीत कला का प्रचार करने के लिए मैंने नाटक कम्पनी खोली थी। प्रतिभा को संगीत सिखाने के लिए मैंने अथक परिश्रम किया था। उसकी कला का पूरा विकास तभी हो सकता था जब कि दुनिया के सामने वह प्रकट की जाती। प्रतिभा भी यही चाहती थी। उसकी इच्छा पूरी की गई। उसने उस रास्ते को नापाक समझा। मैंने भी वही समझा। प्रतिभा में संगीत का जीवन था। संगीत मिस्टर चटर्जी का गुण था। जिस गुण में जीवन नहीं वह बेकार है। बेकार जीवन मिस्टर चटर्जी के लिए एक अभिशाप था। उस अभिशाप से बचने के लिए कायाकल्प किया गया। परिणाम यह हुआ कि प्रेमानंद का यह स्वरूप प्राप्त हुआ। अब मैं प्रसन्न हूँ। "जीवन-प्रतिभा" ही अब

मेरा मूल-मंत्र रह गया है। अब मुझमें प्रेम है, लेकिन प्रेम में पाप नहीं है।"

बिजली बाला ने कहा—"हम सब लखनऊ जाना चाहती हैं। यहाँ से कौन-सा रास्ता वहाँ को गया है ? क्या आप इतना बता सकेंगे ?"

प्रेमानंद—"क्या किसी फ़िल्म कम्पनी में भर्ती होने का विचार है ?"

हवाई जहाज़ से गिराई गई नोटिस को दिखाते हुए बिजली बाला ने कहा—"लखनऊ में निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम में आश्रय पाने के लिए हम सब जाना चाहती हैं। इस नोटिस से तो यही मालूम होता है कि हम सबों को वहाँ ज़रूर आश्रय मिल जायगा। महिलाओं की संस्था है और महिलाओं का ही प्रबंध है। आख़िर कहीं न कहीं बैठने का सहारा करना ही पड़ेगा।"

"अच्छी बात है। यह जो उत्तर की तरफ़ सड़क गई है सीधी लखनऊ को चली गई है। लेकिन ; इतनी दूर पैदल कैसे जाओगी ? रेल पर क्यों नहीं जातीं ?"

माधवी ने कहा—"पास में पैसा कहाँ है ? इसी से पैदल जाने का इरादा है।"

प्रेमानंद—"मैं पैसे का प्रबंध कर दूँगा ? साथ ही साथ अगर संभव हुआ तो वहाँ तक पहुँचा भी दूँगा। अब इस समय थोड़ा सा आराम कर लो।"

———

बीसवां परिच्छेद

मदन के दो मित्र और थे। ये दोनों पंजाबी थे। एक का नाम था गुरुदास और दूसरे का नाम विष्णुदास था। दोनों ही पत्थर के कोयले का रोज़गार करते थे। न तो ये ग़रीब थे और न अमीर ही कहे जा सकते थे। औसत दर्जे की ज़िन्दगी बसर करते थे। हाँ, इतना ज़रूर था कि दिल इन दोनों का बड़ा था। इसीलिए इन दोनों की बहुत पटती थी। कोई ऐसा स्वार्थ न था जिसकी वजह से ये आपस में चालाकी से पेश आते। गुरुदास और विष्णुदास में अगर कुछ भी अन्तर था तो बस इस बात का कि विष्णुदास परेशानी में भी अपने को ख़ुश रखता आर गुरुदास हमेशा ही उदास और चिन्तित बना रहता था।

मनोहर को जब किसी भी ओर से सफलता न हुई तब वह विष्णुदास के पास जाने को तैयार हो गया। तुरंत वह स्टेशन पर आया और कानपूर का टिकट लेकर रेल पर बैठ गया। चार घंटे में वह प्रयाग से कानपूर पहुँच गया। मनोहर को अपने यहाँ आया देख विष्णुदास बहुत ख़ुश हुआ और उसे गुरुदास के पास ले गया। कुशल समाचार पूछ लेने के बाद गुरुदास ने उसे जल-पान कराया।

जब मनोहर जल-पान कर चुका तब उसने गुरुदास से

कहा—"भाई, इधर मैं इतने झंझटों में फँसा रहा कि उसका क्या ज़िक्र करूँ ? यहाँ तक कि तुम्हारे पास ख़त लिखने तक की भी फ़ुर्सत न मिली।"

गुरुदास तो चुप चाप ही बैठा रहा लेकिन विष्णुदास से न रहा गया। उसने मुस्कुराते हुए कहा—"अच्छा किया। ख़त तो प्रेम की दुनिया में बसी हुई बुलबुल को ही लिखा जाता है। दोस्त के लिए ख़त नहीं, सच्चे दिल की पाक मुहब्बत चाहिए।"

गुरुदास ने कहा—"पाक मुहब्बत नापाक दुनिया में मिल कहाँ सकती है ?"

मनोहर—"मिले या न मिले लेकिल लोग उसे याद तो करते ही हैं।"

बातों का रंग रूप बदल कर विष्णुदास ने कहा—"आज हम लोगों को कैसे याद किया।"

गुरुदास ने विष्णुदास का साथ देते हुए कहा—"भाई, ये तो शायर ठहरे, साथ ही साथ उपन्यास—लेखक भी। फँस गये कहीं और लगे मौज करने। हम सबों की याद फिर कैसे आ सकती थी ?"

मनोहर ने हँसते हुए कहा—"कहते तो हो यार बात बड़े पते की।"

बिष्णुदास—"गुरुदास तो ज्योतिष जानते हैं तभी तो इन्हें सब मालूम हो गया।"

मनोहर—"क्या हाथ की रेखा भी देख सकते हो ?"

गुरुदास—"जी हाँ, लाओ, तुम्हारा हाथ भी देख दूँ।"

मनोहर ने अपने दाहिने हाथ की हथेली फैलाते हुए गुरुदास से कहा—"अब हमें तुम्हारी ज्योतिष की जाँच करने का मौक़ा मिल गया।"

हाथ को देखते हुए गुरुदास ने कहा—"हाथ की रेखा से पता लगता है कि तुम कभी भी किसी काम में कामयाब नहीं हो सकते। हाँ, कामयाब तभी होगे जब कि दिल में दोस्तों के लिए मुहब्बत पैदा करोगे, यानी दोस्तों के साथ साथ तुम्हें कामयाबी हासिल हो सकेगी। बस आज इतना ही बताऊँगा।"

विष्णुदास ने मनोहर से पूछा—"मदन बाबू का हाल बहुत दिनों से नहीं मालूम हुआ। न गोपाल ने ही कोई समाचार लिखे। कैलाश के बारे में तो मैं सुन चुका हूँ कि वह स्वामी प्रेमानंद जी के साथ रहता है और हिन्दू-मुस्लिम में मेल कराकर उनमें सच्चा प्रेम पैदा करने के रास्ते पर है। अभी परसों जो ख़त आया है उससे मालूम होता है कि दो ही दिन में वह लखनऊ जायेगा क्यों कि वहाँ भी उसकी सेवाओं की ज़रूरत है। मैं भी आज अभी लखनऊ जाऊँगा। मदन बाबू से भी भेंट हो जायगी। क्या तुम भी चलोगे ?"

"हाँ, हाँ, इसमें हानि ही क्या है ?" कहकर मनोहर तैयार हो गया। गुरुदास तो तैयार था ही। तीनों दोस्त स्टेशन रवाना

हो गये। गाड़ी छूटने पर थी ही। सब के सब एक डिब्बे में प्रवेश कर गये। भीड़ काफ़ी थी। एक महिला कम्बल ओढ़े बेंच पर लेटी हुई थी। उसी के पास एक भिक्षुक बैठा हुआ था। मनोहर ने उस महिला को उठाना चाहा लेकिन भिक्षुक ने बड़े ही विनीत भाव से कहा—"बाबूजी! इसे लेटी रहने दीजिए। इसकी तबियत ठीक नहीं है।"

मनोहर—"आप जायँगे कहाँ?"

भिक्षुक—"लखनऊ। वहाँ पर निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम खुला हुआ है; वहीं इसे आश्रय दिलाने लिये जा रहा हूँ। बड़ी दूर से आ रहा हूँ। चार दिन से रेल ही पर सवार हूँ। यह मेरी बेटी है। इसकी तबियत बहुत ख़राब है। अभी तो ज़रा सी नींद पड़ी है। बाबूजी! आप इसे जगायें नहीं। मैं उठकर खड़ा हुआ जाता हूँ। आप हमारी जगह पर आराम से बैठ जायँ।" एक साथ इतना कहकर भिक्षुक उठ पड़ा।

विष्णुदास ने भिक्षुक स कहा—"बाबा! आप अपनी जगह न छोड़ें। हम लोग किसी न किसी तरह चले ही जायँगे। डेढ़ दो घंटे खड़े ही रहेंगे और क्या होगा?"

भिक्षुक—"नहीं बाबूजी! मैं ग़रीब हूँ। ग़रीबों के दिल में सेवा भाव रहता है। सेवा में ही उन्हें आनंद आता है और उसी आनंद में वे ईश्वर-मिलन के सुख का अनुभव करते हैं। आप आराम से बैठ जायँ। तभी मेरे चित्त को प्रसन्नता होगी।"

गुरुदास ने मनोहर से!कहा—"क्या करोगे? बैठ ही जाओ।"

विष्णुदास और गुरुदास के बहुत कुछ कहने सुनने पर मनोहर बैठ गया। गाड़ी चल पड़ी। सात-आठ स्टेशन पार करते ही डब्बा ख़ाली हो गया। सिर्फ़ ये ही लखनऊ के मुसाफ़िर रह गये। सोई हुई महिला की नींद उचट गई। उसने कराहते हुए पुकारा—"पिता जी!"

भिक्षुक जो कि इसी बीच में अपने स्थान पर बैठ चुका था बोला—"बेटी!"

"अब लखनऊ और कितनी दूर है? मेरा जी घबड़ा रहा है।"

"बस दो स्टेशन और रह गया है। बस थोड़ा सा सब्र करो।"

मनोहर को बेचैनी होने लगी। वह अपने स्थान से उठकर खड़ा हो गया। गुरुदास ने पूछा—"भाई! जाते कहाँ हो?"

विष्णुदास ने कहा—"इतना बेचैन क्यों हो रहे हो?"

मनोहर से न रहा गया। वह तुरंत भिक्षुक के पास जा पहुँचा और उसीके सामने बैठ गया। बड़ी देर तक वह मौन बैठा रहा, लेकिन मालूम नहीं उसकी आँखों में क्यों आँसू भर आये! भिक्षुक भी उसकी इस दशा को ताड़ गया। उसने मनोहर से पूछा—"बाबू जी! आप की आँखों में आँसू क्यों भर रहे हैं? मुझ ग़रीबों की दशा पर आप क्यों तरस खा रहे हैं? आप तो अमीर हैं, फिर ग़रीबों से इतनी मुहब्बत क्यों?"

अपने बिस्तर में से एक पुस्तक को दिखा कर मनोहर ने कहा—"कौन कहता है कि मैं अमीर हूँ? मैं कितना हूँग़रीब इस

बात का पता आपको इस पुस्तक की भूमिका से लग जायगा। बाबाजी! मैं ग़रीब हूँ और सब तरह से सोलहो आने ग़रीब हूँ! तभी तो मेरी "प्रतिभा" का तिरस्कार किया गया। जिसके नाम पर इस अनूठे नाटक की रचना की गई वही मुझसे रूठ गई!"

मनोहर की बातों को सुनकर प्रतिभा किसी तरह उठकर बैठ गई और बोली—"मनोहर बाबू! अब मैं आपकी प्रतिभा का कभी भी तिरस्कार न करूँगी। लाइए, देखूँ तो वह आपकी प्रतिभा कहाँ है? आप जैसे लेखकों का तिरस्कार करना ठीक न होगा।"

मनोहर को इतनी ख़ुशी हासिल हुई मानो आसमान का चाँद हाथ आ गया हो। उसने अपने लिखे हुए उसी "प्रतिभा" नाटक की छपी हुई एक प्रति उसे देते हुए कहा—"समर्पण तो पहिले से ही कर चुका हूँ। यह देखो इसमें तुम्हारी तसवीर भी दी हुइ है।"

प्रतिभा कुछ कहने ही जा रही थी कि बीच में ही भिक्षुक बोल उठा—"आपने अपनी "प्रतिभा" को मेरी प्रतिभा को सौंपा। बदले में अगर मैं भी अपनी प्रतिभा को आपको सौंप दूँ तब कैसा हो? आपसे अधिक सच्चा प्रेमी कौन मिलेगा?"

मनोहर ने कहा—"लेकिन मैं तो बहुत ग़रीब हूँ। न रहने का घर है और न खाने को दाना। मेरे साथ प्रतिभा को सुख कहाँ? बस मैं अपनी ग़रीबी से लाचार हूँ।"

———

इक्कीसवाँ परिच्छेद

बिजली बाला, मालती तथा माधवी को साथ लेकर प्रेमानंद जी लखनऊ आये। उनके साथ कैलाश भी था। कैलाश को देखकर मदन बहुत ही प्रसन्न हुआ। कैलाश ने प्रेमानंद जी का परिचय देते हुए लखनऊ आने का कारण कह सुनाया। वे तीनों आश्रम में भेज दी गई। केतकी और राधा ने उन सबों को बड़े स्नेह से अपने पास बैठाया और कहा—"आप सबों का हम स्वागत करती हैं। जहाँ तक संभव है आप सब बहनों को किसी भी तरह का कष्ट न होने पायगा।" इसके बाद उन सबों का नाम रजिस्टर में दर्ज कर लिया गया। प्रेम और स्नेह की शीतल धारा में उन सबों की अशान्ति जाती रही।

इसके बाद गुरुदास, विष्णुदास; मनोहर, भिक्षुक और प्रतिभा के साथ आ पहुँचे। इन सबों की बड़ी आवभगत की गई। मदन ने चाहा कि प्रतिभा को भी आश्रम में भेज दिया जावे लेकिन मनोहर ने उसका विरोध करते हुए कहा—"आश्रम तो उनके लिए है जो कि अनाथ हों। प्रतिभा अनाथ थोड़े ही है।"

मनोहर की बातों को सुनकर भिक्षुक मन ही मन बहुत ख़ुश हुआ। इतने में कैलाश के साथ प्रेमानंद भी आ गये। प्रतिभा को आई हुई देखकर वे उसके पास जाकर बैठ गये और बोले—"बहन प्रतिभा! तुम यहाँ पर कैसे आई?"

"श्री प्रेमानंद जी का आशीर्वाद प्राप्त करने।"

प्रेमानंद—"जिसके प्रकाश में मैं प्रेमानंद बना आज वही आशीर्वाद प्राप्त करने आया है, यह समझ में नहीं आ रहा है।"

मदन ने प्रेमानंद जी से पूछा—"इन देवी जी को आप किस तरह जानते हैं?"

प्रेमानंद--"सचमुच ये देवी हैं, पाक और साफ़ हैं। मेरे संगीत की प्रतिभा यही हैं। इन्हीं के प्रकाश में मेरे संगीत का उत्थान हुआ और इन्हीं के वियोग में उस संगीत का पतन भी हुआ। यहाँ तक कि मैं क्या से क्या हो गया हूँ।"

मनोहर ने कहा—"यह वह देवी हैं जिनकी बदौलत मनोहर को भी साहित्य जगत में प्रेम का साम्राज्य दिखाई पड़ने लगा। साथ ही साथ मेरे भी विचार सच्चे प्रेम के पथ पर सत्य की खोज करने लगे हैं।"

भिक्षुक ने साधारण ढंग से कहा—"प्रतिभा मेरी बेटी है। मनोहर बाबू इसके संरक्षक आज से हुए हैं। इनसे अधिक हितैषी प्रतिभा के लिए दूसरा कोई नहीं मिल सकता। प्रमाण यह है।"

इतना कहकर उसने मनोहर का प्रकाशित वही प्रतिभा नाटक उन सबों को दिखा दिया। भूमिका में इस प्रतिभा का पूरा परिचय दिया हुआ था। साथ ही साथ उसकी पवित्रता की भी पुष्टि की गई थी। भूमिका पढ़कर मदन दंग रह गया।

मनोहर ने मदन से कहा—"मैंने सुना है कि तुम्हारा एक छोटा भाई है और वह अविवाहित भी है। क्या यह सच है?"

मदन ने कहा—"हाँ सच है।"

मनोहर ने कहा—"मैं चाहता हूँ कि उसी के साथ प्रतिभा का विवाह कर दिया जावे।"

प्रेमानंद जी ने समर्थन करते हुए कहा—"प्रतिभा के साथ अगर सुन्दर का विवाह हो गया तो बहुत ही अच्छी बात होगी। मानता हूँ, प्रतिभा एक्ट्रेस थी लेकिन उसने कोई पाप नहीं किया है। मेरे ही साथ वह घर से चली थी और हमेशा नाटक कंपनी में ही रही। पढ़ी-लिखी, सकल गुण-सम्पन्न प्रतिभा की पवित्रता का प्रमाण देने वाला मैं स्वयं मौजूद हूँ।"

मदन ने कहा—"अगर सुन्दर राज़ी हो जाय तो।"

प्रेमानंद जी ने कहा—"अच्छा, सुन्दर को बुलाया जाय।"

सुन्दर बुलाया गया। वह आ गया। उसके आते ही मदन ने उससे सब बातें कह दीं। प्रतिभा को देखकर वह ख़ुश तो हुआ लेकिन कुछ कह न सका। कई बार पूछने पर उसने जवाब दिया—"मुझे अभी एक आदमी से और सलाह लेनी है। उसके बाद मैं अपनी राय दूँगा।"

मदन समझ गया कि सुन्दर केतकी से पूछना चाहता है। इस लिए उसने सुन्दर से कहा—"मैं कुमारी केतकी देवी को यहीं पर बुलाये देता हूँ।" बुलाते ही केतकी भी आ गई। मनोहर ने मदन से कहा—"क्या यही केतकी देवी हैं?"

मदन—"हाँ, आश्रम इन्हीं की देख-रेख में चल रहा है।"

केतकी जब कुर्सी पर बैठ गई तब मदन ने प्रतिभा का परिचय देते हुए उससे कहा—"लोगों की राय है कि प्रतिभा के साथ सुन्दर का विवाह कर दिया जाय। इसमें तुम्हारी क्या राय है?।"

बिना किसी हिचक के केतकी ने जवाब दिया—"जब से मैंने निर्मला अनाथ-महिला-आश्रम का भार अपने ऊपर लिया है तब से यह निश्चय कर चुकी हूँ कि मैं चिरकुमारी रहूँगी क्यों कि विवाह होते ही आज़ादी छिन जाती है; और जब आज़ादी ही छिन गई तब फिर भला मैं अपनी बहिनों की क्या सेवा कर सकूँगी? सेवा करने के लिए आज़ाद रहना निहायत ज़रूरी है।"

प्रतिभा ने बहुत ही सीधी-सादी भाषा में कहा—"लेकिन, लता तभी अच्छी मालूम होती है जब कि वह किसी महान वृक्ष से लिपट कर अपने उत्थान की चेष्टा करती रहती है। जीवन में उत्थान होना चाहिए। उत्थान के लिए स्त्री और पुरुष दोनों का ही सच्चा प्रेम एक-दिल होना ज़रूरी है। जीवन-पथ में अगर स्त्री पुरुष आपस में एक दूसरे के सच्चे साथी बन जाँय तो यह पराधीन होना नहीं है बल्कि प्रेम-राज्य में लोकोत्तर आनंद प्राप्त करना है। जब लोकोत्तर आनंद प्राप्त होगा तभी जीवन भी सफल होगा और उसी सफलता में सेवा-भाव स्वतः विकसित हो जाता है।"

प्रतिभा की इन बातों से पता चल गया कि केतकी की तुलना में प्रतिभा कम नहीं है। दोनों ही समान बुद्धिमती हैं। अब

सुन्दर और प्रतिभा के विवाह की तैयारी होने लगी। मनोहर, प्रेमानंद, भिक्षुक, कैलाश, गुरुदास तथा विष्णुदास सभी ख़ुश हो गये और जब तक विवाह न हो जाय तब तक लखनऊ में ही ठहरने के लिए मदन ने उन सबों से आग्रह किया।

× × × ×

प्रतिभा के साथ सुन्दर का विवाह हो गया। इसके भी कई महीने बीत गये। जितने दोस्त लखनऊ आये थे सभी अपने अपने घर चले गये। एक दिन मदन ने केतकी, सुन्दर और प्रतिभा को बुलाकर कहा—"निर्मला के नाम पर जो अनाथ-महिला-आश्रम खोला गया उसकी देख रेख कुमारी केतकी देवी कर ही रही हैं। हम लोगों को भी इनसे कुछ शिकायत नहीं है। इधर घर की जो सम्पत्ति है उसका इंतज़ाम सुन्दर कर ही लेता है और अच्छे ढंग से करता है। निर्मला के अभाव में घर सूना रहा करता था। सब कुछ था लेकिन फिर भी ऐसा मालूम होता था मानों कहीं कुछ है ही नहीं। देवी स्वरूपणी प्रतिभा देवी के आगमन से वह अभाव भी जाता रहा। सुन्दर! अब मैं यह चाहता हूँ कि थोड़ा सा तीर्थ-भ्रमण कर आऊँ। तुम सब ख़ुश रहो यही मेरा आशीर्वाद है।"

सुन्दर से कुछ भी कहते न बना। वह चुपचाप बैठा ही रहा। केवल आँखों से आँसू बह रहे थे। प्रतिभा की भी यही दशा थी। केतकी ने साहस करते हुए कहा—"जीजा जी, अब आप क्या हम सबों को छोड़ना चाहते हैं?"

"मुझे सब मिला लेकिन एक न मिला। मैं उसी की खोज में जाना चाहता हूँ। जिसके एक साधारण संगीत ने मेरी उलझन को दूर कर दिया था, जिसके संगीत मय उपदेश से मैंने ग़रीबों के दिल का महत्व समझा। बस अब उसीसे मिलने की इच्छा है। उसी के साथ मुझे आनंद मिलेगा।"

प्रतिभा ने कहा—"क्या मैं उस संगीत को सुन सकती हूँ?"

"ख़ुशहाल रहो, ख़ुशहाल रहो" वाला गीत मदन ने प्रतिभा को सुना दिया। सुनकर प्रतिभा ने कहा—"यह तो मेरे पिता का ही गीत है। जब मैं घर से निकल कर नाटक कम्पनी में काम करती थी तब वे फ़क़ीर बनकर यही गीत गाया करते थे और मेरी खोज किया करते थे। जब मैं यहाँ आई तब तो वे भी साथ आये थे।"

मदन—"जब उन्हें पहिचान ही न सका तब उनके आने से लाभ क्या? और मैं उन्हें पहिचानता ही कैसे जब कि मेरा दिल ग़रीबों के दिल से भिन्न था। उन्हें अच्छे ढंग से पहिचानने के लिए ज़रूरत इस बात की है कि पहिले ग़रीबों के दिल के समान अपना दिल बनाया जाय और वह भी सच्चाई के साथ। लेकिन मैं देखता हूँ कि इस वैभव में वैसा होना कठिन है इसी लिए मैं अब ग़रीबों के दिल को पहिचानने के लिए ग़रीब बनकर देश भ्रमण करना चाहता हूँ। अब मुझे रोकने की चेष्टा न करो।"

॥ इति ॥